प्रथम इंटरनेशनल की कहानी

1. आरम्भिक कदम

28 सितंबर 1864 को लंदन के बीचोबीच स्थित सेंट मार्टिन हाल लगभग दो हजार मज़दूरों की मौजूदगी से खचाखच भरा हुआ था। वे लोग इंगलैंड के ट्रेड यूनियन नेताओं और यूरोपीय महाद्वीप के कुछ श्रमिक समूहों की ओर से बुलाई गई सभा में शरीक होने के लिए आए थे। अग्रिम सूचना में कहा गया था कि 'पेरिस के कामगारों का एक प्रतिनिधिमंडल' आया है और वह अपने 'अंग्रेज भाइयों के उद्‌बोधन का जवाब देगा तथा जनता के बीच बेहतर समझदारी की योजना प्रस्तुत करेगा'। असल में एक साल पहले लंदन में जब जुलाई 1863 में कई फ़्रांसिसी और अंग्रेज मज़दूर संगठन जार के विरोध में पोलिश जनता के साथ एकजुटता जाहिर करने के लिए मिले थे तो उन्होंने मज़दूर वर्ग आंदोलन के प्रमुख उद्देश्यों के बारे में एक घोषणा की थी। मशहूर यूनियन नेता जार्ज आडगर (1813-77) ने फ़्रांसिसी मज़दूरों के नाम अंग्रेजों की ओर से एक उद्‌बोधन तैयार किया था जो बी-हाइव नामक पाक्षिक में छपा था :

> "मज़दूरों की भलाई के लिए जनगण का साथीपन बहुत जरूरी है क्योंकि हमने पाया कि जब कभी हम काम के घंटे कम करने के जरिए या मेहनत की कीमत बढ़ाने के जरिए अपने सामाजिक हालात को बेहतर बनाने की कोशिश करते हैं तो हमारे मालिक कम मज़दूरी पर हमारा काम करने के लिए फ़्रांसिसी, जर्मन, बेल्जियन या अन्य लोगों को लाने की धमकी देते हैं; और हमें दुख है कि ऐसा हुआ भी है। हालांकि इसका कारण यह नहीं था कि हमारे महाद्वीपीय भाई हमें कोई नुकसान पहुंचाना चाहते थे बल्कि इसका कारण तमाम देशों के औद्योगिक वर्गों के बीच नियमित और व्यवस्थित संचार का अभाव था। हमारा उद्देश्य कम

> मज़दूरी पाने वालों की मज़दूरी को यथासंभव उनकी मज़दूरी के करीब ले आना है जिन्हें बेहतर मज़दूरी मिलती है ताकि हमारे मालिक हमें एक दूसरे से लड़ा न सकें और अपनी लालच पूरी होने लायक न्यूनतम मज़दूरी तक न ले जा सकें।"

इस पहलकदमी के संगठनकर्ताओं को कल्पना नहीं थी, न ही उनको अनुमान था कि कुछ ही दिनों बाद इसका क्या नतीजा निकलेगा। उन्होंने सोचा था कि ऐसा अंतर्राष्ट्रीय मंच बनाया जाए जहां मज़दूरों पर असर डालने वाली प्रमुख समस्याओं पर विचार विमर्श किया जाएगा लेकिन उसमें मज़दूर वर्ग की ट्रेड यूनियन और राजनीतिक कार्यवाहियों को संयोजित करने वाले संगठन की स्थापना की बात शामिल नहीं थी। इसी तरह उनकी विचारधारा में शुरू में वर्ग संघर्ष और सुपरिभाषित राजनीतिक लक्ष्य की जगह लोगों के बीच भाईचारा और विश्व शांति का महत्व जैसे सामान्य मानवीय तत्व व्याप्त थे। इन्हीं सीमाओं के कारण सेंट मार्टिन हाल की सभा भी तत्कालीन ढेर सारी अमूर्त लोकतांत्रिक पहलकदमियों जैसी ही होती जिनका कोई नतीजा नहीं निकलता। लेकिन इसने तो मज़दूर आंदोलनों के सभी संगठनों हेतु ऐसे आदर्श रूप (इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन) को जन्म दिया जिसका अनुसरण बाद में सुधारवादियों और क्रांतिकारियों, दोनों ने संदर्भ बिंदु की तरह किया।

जल्दी ही समूचे यूरोप में इसने भावावेग की लहर उठा दी। वर्गीय एकजुटता को इसने साझा आदर्श बना दिया और दुनिया बदलने जैसे सबसे क्रांतिकारी लक्ष्य के लिए संघर्ष करने हेतु भारी संख्या में स्त्री-पुरुषों को प्रेरित किया। इसी वजह से 1868 में ब्रसेल्स में आयोजित इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस के मौके पर टाइम्स के मुख्य लेखक ने इस प्रोजेक्ट का मकसद ठीक ही बताया था :

> "केवल सुधार पर ही विचार नहीं हुआ, बल्कि जागरण और वह भी महज एक देश के नहीं बल्कि समूची मानव जाति के जागरण पर विचार हुआ। ईसाई चर्च को छोड़कर किसी भी संस्था ने शायद ही कभी इतना व्यापक लक्ष्य अपने लिए तय किया होगा। संक्षेप में इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन का यही कार्यक्रम है।"

इंटरनेशनल के कारण मज़दूर आंदोलन पूंजीवादी उत्पादन पद्धति की स्पष्ट समझ हासिल कर सका, अपनी ताकत के बारे में अधिक सचेत हुआ तथा संघर्ष के नए और अधिक उन्नत रूप विकसित कर सका। इस संगठन की प्रतिध्वनि

यूरोप की सीमाओं के परे सुनाई पड़ी तथा इससे ब्यूनस आयर्स के कारीगरों और कलकत्ते के शुरुआती मज़दूर संगठनों में एक दूसरी दुनिया संभव होने की उम्मीद पैदा हुई। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड के मज़दूर समूहों ने भी इसकी सदस्यता के लिए आवेदन किया।

इसके उलट शासक वर्गों में इसकी स्थापना की खबर से भय व्याप्त हो गया। इतिहास में मज़दूर भी सक्रिय भूमिका निभाना चाहते हैं इस खयाल से ही उनकी रीढ़ में झुरझुरी पैदा हो गई और ढेर सारी सरकारों ने इंटरनेशनल के खात्मे को अपना ध्येय बना लिया और उपलब्ध सारे साधनों के जरिए इसे अंजाम दिया।

2. सही जगह पर सही आदमी

जिन मज़दूर संगठनों ने इंटरनेशनल की स्थापना की वे कुछ-कुछ बहुरंगी थे। इसकी केंद्रीय चालक शक्ति ब्रिटेन के ट्रेड यूनियन थे जिनके लगभग सभी नेताओं की विश्वदृष्टि सुधारवादी थी और जिनकी दिलचस्पी मुख्य रूप से आर्थिक सवालों में थी। वे मज़दूरों के हालात में सुधार के लिए लड़ते थे लेकिन पूंजीवाद पर सवाल नहीं उठाते थे। इसलिए वे इंटरनेशनल को ऐसा हथियार समझते थे जो हड़ताल होने पर विदेशों से कामगार लाने पर रोक लगाकर उनके लक्ष्य का समर्थन कर सकता था।

संगठन में दूसरी महत्वपूर्ण ताकत साझेदारीवादी थे, जिनका फ़्रांस में लंबे दिनों से दबदबा था लेकिन बेल्जियम और फ़्रांसिसी भाषी स्विट्ज़रलैंड में भी वे मजबूत थे। पियरे जोसेफ प्रूधों (1809-65) के सिद्धांतों के अनुरूप वे राजनीति में मज़दूर वर्ग की किसी भी हिस्सेदारी और संघर्ष के हथियार के बतौर हड़ताल के विरोधी थे तथा स्त्री मुक्ति के सवाल पर उनके विचार संकीर्ण थे। संघीय तरीके से गठित सहकारी व्यवस्था की वकालत करने वाले ये लोग मानते थे कि कर्ज पर समान अधिकार के जरिए पूंजीवाद को बदलना संभव है। इसलिए कहा जा सकता है कि वे लोग इंटरनेशनल का दक्षिणपंथ थे।

ये दोनों घटक संख्या में बहुमत में थे। इन्हीं के साथ अलग किस्म के कुछ और भी तत्व थे। तीसरे महत्वपूर्ण लोग कम्युनिस्ट थे जो कार्ल मार्क्स (1818-43) के व्यक्तित्व के इर्द गिर्द समूहबद्ध थे। ये लोग अनेक जर्मन और स्विस शहरों में तथा लंदन में बहुत सीमित प्रभाव वाले छोटे छोटे समूहों में सक्रिय थे। वे पूंजीवाद

के विरोधी थे यानी मौजूदा उत्पादन प्रणाली का विरोध करते थे और इसे उखाड़ फेंकने के लिए राजनीतिक कार्यवाही को जरूरी समझते थे।

इंटरनेशनल की स्थापना के समय उसमें ऐसे तत्व भी शामिल थे जिनका समाजवादी परंपरा से कोई लेना देना नहीं था। उदाहरण के लिए पूर्वी यूरोप के प्रवासियों के कुछ समूह जो अमूर्त लोकतांत्रिक आदर्शों से प्रेरित थे। इनमें जिसेप मैज़िनी (1805-72) के अनुयायी थे जिनकी अंतर्वर्गीय धारणा का केंद्र राष्ट्रीय मांगें थीं और उत्पीड़ित जनता की मुक्ति के लिए आम अपील जारी करने के लिए उन्हें इंटरनेशनल उपयोगी लगता था।

यह तस्वीर इस तथ्य से और उलझ जाती है कि इंटरनेशनल में शरीक फ़्रांसिसी, बेल्जियन और स्विस मज़दूरों के कुछ समूह अपने साथ तमाम किस्म के भ्रामक विचार लेकर आए थे, कुछ किसी काल्पनिक आदर्श से प्रेरित थे; जबकि फ़र्दिनांद लासाल (1825-64) के अनुयायियों वाली पार्टी–जनरल एसोसिएशन आफ़ जर्मन वर्कर्स–इंटरनेशनल से कभी जुड़ी नहीं लेकिन इसके इर्द गिर्द घूमती रही और वह ट्रेड यूनियनवाद की विरोधी थी तथा केवल राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक कार्यवाही करने के पक्ष में थी।

नवजात इंटरनेशनल पर इन सभी समूहों ने अपने सांस्कृतिक ट्रेड यूनियन अनुभवों के जटिल जाल के निशान छोड़े। ऐसे व्यापक संगठन को संघीय आधार पर भी साथ रखना और सामान्य ढांचा बनाना सचमुच कठिन काम था। इसके अलावा, अगर साझा कार्यक्रम पर सहमति बन भी जाती तो प्रत्येक प्रवृत्ति जहां कहीं बहुमत में होती उन स्थानीय प्रभागों पर (कभी कभी केंद्रापसारी) असर डालती।

एक ही संगठन में इन सभी धाराओं को शांतिपूर्वक साथ साथ बनाए रखना और वह भी ऐसे कार्यक्रम के इर्द गिर्द जो उन सबके शुरुआती रुख से बहुत दूर था, मार्क्स की महान उपलब्धि थी। अपनी राजनीतिक प्रतिभा से उन्होंने ऊपरी तौर पर परस्पर विरोधी लगने वाली चीजों में संगति पैदा की और सुनिश्चित किया कि इंटरनेशनल अपने पहले के अनेक मज़दूर संगठनों की तरह तेजी से गुम न हो जाए। मार्क्स ने इंटरनेशनल को स्पष्ट मकसद मुहैया कराया और मार्क्स ने ही ऐसा ठोस वर्ग आधारित किंतु समावेशी राजनीतिक कार्यक्रम बनाया जिसके कारण इस संगठन को तमाम संकीर्णताओं से परे जन चरित्र हासिल हुआ। इसकी जनरल कौंसिल की राजनीतिक आत्मा हमेशा मार्क्स रहे : उन्होंने इसके सभी प्रमुख

प्रस्ताव लिखे और सभी कांग्रेसों की रपटें तैयार कीं (केवल 1867 की लूसान कांग्रेस को छोड़कर जब वे कैपिटल का प्रूफ़ पढ़ने में डूबे हुए थे)। वे 'सही जगह पर सही आदमी' थे जैसा कि कभी जर्मन मज़दूर नेता जोहान्न गेआर्ग इकारियस ने कहा था।

इंटरनेशनल के संस्थापक के रूप में मार्क्स की तस्वीर बाद में गढ़ी गई। इसके विपरीत वे तो सेंट मार्टिन हाल की सभा के आयोजकों में भी नहीं थे। मित्र एंगेल्स को एक चिट्ठी में उन्होंने बताया कि वे 'मंच पर न बोलने वाले की हैसियत' में बैठे थे। फिर भी तत्काल उन्होंने इस घटना में निहित संभावना को भांप लिया और नया संगठन अपना लक्ष्य सफलतापूर्वक हासिल करे इसकी गारंटी के लिए कड़ी मेहनत की। कम से कम कुछ लोगों के बीच उनके नाम की इज्जत थी जिसके चलते उन्हें 34 सदस्यी स्थायी समिति में नियुक्त किया गया और वहां उन्होंने जल्दी ही इतना भरोसा जीत लिया कि इंटरनेशनल का उद्घाटन भाषण और अस्थायी नियमावली लिखने की जिम्मेदारी उन्हें मिली। इन बुनियादी दस्तावेजों में और इसके बाद के अन्य दस्तावेजों में भी मार्क्स ने इंटरनेशनल के विभिन्न घटकों से उनके सर्वोत्तम विचार ग्रहण किए लेकिन इसके साथ ही संघाधिपत्यवादी रुझानों और संकीर्णतावादी स्वरों की सफाई भी कर दी। मजबूती से उन्होंने आर्थिक और राजनीतिक संघर्ष को एक दूसरे से जोड़ा तथा अंतर्राष्ट्रीय सोच और कार्यवाही को न पलट सकने वाली चीज बना दिया।

मार्क्स की क्षमता की बदौलत ही इंटरनेशनल राजनीतिक संश्लेषण कर सका। उन्होंने विभिन्न राष्ट्रीय संदर्भों को ऐसे साझा संघर्ष के प्रोजेक्ट में गूंथ दिया जिसमें निर्देशक केंद्र से वे काफी हद तक स्वायत्त थे लेकिन पूरी तरह स्वतंत्र नहीं थे। कभी कभी एकता को बरकरार रखना मुश्किल हो जाता था खासकर इसलिए कि मार्क्स का पूंजीवाद विरोध, संगठन में कभी प्रमुख राजनीतिक मत नहीं था। बहरहाल समय बीतने के साथ कुछ उनकी नमनीयता के चलते और कुछ विभाजनों के चलते मार्क्स की सोच प्रधान सिद्धांत बन गई। काम बेहद कठिन था लेकिन उन दिनों के संघर्षों से राजनीतिक व्याख्या की कोशिशों को बहुत फायदा मिला। मज़दूरों की गोलबंदी की प्रकृति, पेरिस कम्यून की व्यवस्था विरोधी चुनौती, ऐसे व्यापक और जटिल संगठन को इकट्ठा रखने का अभूतपूर्व काम, विभिन्न सैद्धांतिक और राजनितिक मुद्दों पर मज़दूर आंदोलन की अन्य प्रवृत्तियों के साथ लगातार बहस : इन सबने मार्क्स को राजनीतिक अर्थशास्त्र की सीमाओं के पार

जाने को मजबूर किया जिसमें 1848 की क्रांति की पराजय तथा अधिकांश प्रगतिशील ताकतों के उतार के बाद से ही उनका सारा ध्यान लगा हुआ था। उन्हें भी अपने विचार विकसित और संशोधित करने, पुरानी तयशुदा बातों को बहस के लिए खोलने तथा अपने आपसे नए सवाल पूछने और कम्युनिस्ट समाज की मोटी रूपरेखा खींचकर खासकर पूंजीवाद की अपनी आलोचना को तीखा बनाने की प्रेरणा मिली। इंटरनेशनल में मार्क्स की भूमिका के बारे में पारंपरिक सोवियत नजरिया यह है कि अपने अध्ययन के जरिए मार्क्स ने जिस राजनीतिक सिद्धांत को पहले ही ढाल लिया था उसे इतिहास के उस दौर पर यांत्रिक तरीके से उन्होंने लागू कर दिया लेकिन यह नजरिया सच्चाई से पूरी तरह से अलग है।

3. सदस्यता और संरचना

जीवनकाल और बाद के दशकों में भी इंटरनेशनल का चित्रण विशाल और आर्थिक तौर पर मजबूत संगठन के रूप में किया जाता रहा है। चाहे अपूर्ण जानकारी के चलते हो या इसके कुछ नेताओं द्वारा असलियत को बढ़ा चढ़ाकर बताने के कारण या विरोधियों द्वारा निर्मम दमन का बहाना खोजने की वजह से हो, इंटरनेशनल की सदस्यता का हमेशा विस्फारित अनुमान किया गया। जून 1870 में इसके कुछ फ़्रांसिसी नेताओं पर अभियोग लगाने वाले सरकारी वकील ने कहा कि यूरोप में इस संगठन के 8 लाख से अधिक सदस्य हैं; एक साल बाद पेरिस कम्यून की पराजय के बाद टाइम्स ने इस संख्या को कुल 25 लाख बताया और अनुदारपंथियों में इसका अध्ययन करने वाला मुख्य मनुष्य आस्कर तेस्तुत (1840-अज्ञात) इसके 50 लाख से अधिक होने का अनुमान लगाता है।

असल में इंटरनेशनल की सदस्य संख्या इससे काफी कम थी। सही अनुमान लगाना हमेशा कठिन रहा और यह बात इसके नेताओं तथा इसका निकट से अध्ययन करने वालों के लिए भी उतनी ही सच है। लेकिन शोध की मौजूदा स्थिति में अंदाजा लगाया जाता है कि 1871-72 में इसके उठान के दिनों में यह संख्या डेढ़ लाख से कुछ अधिक थी : ब्रिटेन में पचास हजार, फ़्रांस और बेल्जियम में मिलाकर तीस हजार से ऊपर, स्विट्ज़रलैंड में छह हजार, स्पेन में लगभग तीस हजार, इटली में लगभग पचीस हजार, जर्मनी में दस हजार से ऊपर (लेकिन ज्यादातर सोशल डेमोक्रेटिक वर्कर्स पार्टी के सदस्य), इसके अलावा अन्य यूरोपीय देशों में कुछेक हजार तथा अमेरिका में चार हजार।

उन दिनों इंगलैंड की ट्रेड यूनियनों और जनरल एसोसिएशन आफ़ जर्मन वर्कर्स को छोड़कर प्रभावी मज़दूर वर्ग संगठनों का अभाव था, ऐसी स्थिति में यह संख्या निश्चित रूप से काफी थी। इस बात को भी दिमाग में रखना होगा कि अपने समूचे जीवनकाल में इंटरनेशनल को कानूनी संगठन की मान्यता केवल ब्रिटेन, स्विट्ज़रलैंड, बेल्जियम और अमेरिका में मिली थी। अन्य देशों में जहां इसकी मौजूदगी ठोस थी (फ़्रांस, स्पेन, इटली) वहां अनेक सालों तक यह कानूनी हाशिए पर रही और इसके सदस्यों को उत्पीड़न झेलना पड़ता था। जर्मन संघ के 39 राज्यों में इंटरनेशनल में शिरकत का मतलब कानून तोड़ना होता था और आस्ट्रो-हंगरी साम्राज्य में कुछ सदस्यों को गोपनीय तरीके से काम करने को मजबूर होना पड़ा। बहरहाल इंटरनेशनल में अपने घटकों को अखंड संपूर्ण में एकताबद्ध कर लेने की उल्लेखनीय क्षमता थी। अपने जन्म के एकाध साल बाद ही सैकड़ों मज़दूर सभाओं को संघबद्ध करने में इसने सफलता पाई; 1868 के बाद से मिखाइल बाकुनिन (1814-76) के अनुयायियों के प्रचार के चलते स्पेन में अन्य सभाएं जोड़ी गईं और पेरिस कम्यून के बाद इटली, हालैंड, डेनमार्क और पुर्तगाल में इसके प्रभाग पैदा हो गए। बेशक इंटरनेशनल का विकास असमान रहा : कुछ देशों में इसमें वृद्धि हुई जबकि कुछ अन्य देशों में स्थिर रहा या दमन के चलते पीछे हटा। फिर भी जो लोग या संगठन अल्पकाल के लिए भी इंटरनेशनल में शामिल हुए उनमें जुड़ाव का मजबूत अहसास बना रहा। जिन संघर्षों में उन्होंने भाग लिया था जब वे समाप्त हो गए और विपत्ति तथा निजी मुश्किलात के चलते उन्हें दूरी बनानी पड़ी तो भी वर्गीय एकजुटता के बंधन उन्होंने बनाए रखे और जिस संगठन ने जरूरत के वक्त उनका साथ दिया था उसके नाम पर रैली के लिए आवाहन होने, पोस्टर पर लिखे शब्दों या संघर्षों का लाल झंडा फहराने के समय वे जो कर सकते थे करते रहे।

बहरहाल सारे कामगारों का बहुत छोटा हिस्सा ही इंटरनेशनल का सदस्य था। पेरिस में उनकी तादाद कभी दस हजार से अधिक नहीं हुई और रोम, वियेना या बर्लिन जैसी अन्य राजधानियों में तो वे उंगली पर गिने जा सकते थे। एक और पहलू इंटरनेशनल में शामिल मज़दूरों की प्रकृति से जुड़ा हुआ है : इसे मजूरी श्रमिकों का संगठन होना था लेकिन असल में ऐसे बहुत कम श्रमिक इसमें शामिल हुए; मुख्य आमद इंगलैंड के निर्माण मज़दूरों, बेल्जियम के टेक्सटाइल मज़दूरों और फ़्रांस तथा स्विट्ज़रलैंड में भांति भांति के कारीगरों की हुई थी।

ब्रिटेन में इस्पात मज़दूरों को छोड़कर औद्योगिक सर्वहारा के बीच इंटरनेशनल की मौजूदगी हमेशा ही छिटपुट रही। किसी भी देश में औद्योगिक सर्वहारा बहुसंख्यक नहीं हो सका, खासकर दक्षिणी यूरोप में संगठन के विस्तार के बाद तो कम से कम ऐसा ही था। दूसरी बड़ी सीमा यह थी कि पहली कांग्रेस की तैयारी के समय इस दिशा में कोशिश करने के बावजूद अकुशल मज़दूरों को आकर्षित करने में संगठन नाकामयाब रहा था। अस्थायी जनरल कौंसिल के प्रतिनिधियों के लिए जारी निर्देशों में विभिन्न प्रश्न के तहत कहा गया :

> "अपने मूल उद्देश्यों के अलावे ट्रेड यूनियनों को अब मज़दूर वर्ग की संपूर्ण मुक्ति के व्यापक हित में संगठक केंद्र के बतौर सचेत रूप से काम करना सीखना होगा। इस दिशा में प्रवृत्त प्रत्येक सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन की उन्हें मदद करनी होगी। अपने आपको समूचे मज़दूर वर्ग का प्रतिनिधि और हिमायती मानकर उसी तरह से काम करते हुए उन्हें अपनी कतारों में समाज–बाह्य मनुष्यों को शामिल करने से नहीं चूकना चाहिए। असाधारण परिस्थितियों ने जिन्हें शक्तिहीन बना दिया है, मसलन खेतिहर मज़दूर और सबसे कम पगार वाले ऐसे कामगारों के हितों का उन्हें ध्यान रखना होगा। उन्हें व्यापक जगत को समझाना होगा कि उनकी कोशिशें संकीर्ण और स्वार्थ से चालित होने के बदले लाखों पददलित जनगण की मुक्ति की दिशा में लक्षित हैं।"

बहरहाल ब्रिटेन में भी इंटरनेशनल में अकुशल मज़दूर नहीं शामिल हुए, इसका अपवाद खनिक थे। सदस्यों की भारी बहुसंख्या दर्जी, बुनकर, जूता गांठने वाले और बढ़ई थे यानी मज़दूर वर्ग के वे हिस्से जो उस समय सर्वाधिक संगठित और सबसे अधिक वर्ग सचेत थे। अंतिम बात कि इंटरनेशनल रोजगारशुदा मज़दूरों का संगठन रहा; बेरोजगार इसमें कभी शामिल न हो सके। इसके नेताओं की उत्पत्ति में यह बात दिखाई पड़ती है क्योंकि लगभग वे सभी या तो कारीगर थे या बुद्धिजीवी।

इसी तरह इंटरनेशनल के संसाधन भी जटिल थे। कहा जाता था कि इसके पास अकूत संपदा है लेकिन सच्चाई थी कि इसकी आय हमेशा अनिश्चित रही। व्यक्तियों की सदस्यता की फ़ीस एक शिलिंग थी जबकि ट्रेड यूनियनों से अपेक्षा थी कि वे अपने प्रत्येक सदस्य की ओर से तीन पेन्स का चंदा देंगी। बहरहाल अनेक देशों में व्यक्ति सदस्य बिरले ही थे और ब्रिटेन में ट्रेड यूनियनों का योगदान इतना डांवाडोल स्थिति में रहा और बार बार घटाना पड़ता था कि जनरल कौंसिल

को इस तथ्य को स्वीकार करके कहना पड़ा कि उनके लिए जितना संभव हो उतना चुका दें। जो चंदा एकत्र होता वह कभी बीसेक पाउंड सालाना से अधिक न हो सका और उससे महासचिव का चार शिलिंग साप्ताहिक मेहनताना तथा कार्यालय का किराया ही निकलना मुश्किल होता था। कार्यालय का किराया बाकी रह जाने के चलते खाली करने की धमकी बार बार संगठन को झेलनी होती थी।

इंटरनेशनल के एक प्रमुख राजनीतिक-सांगठनिक दस्तावेज में मार्क्स ने इसका कार्यभार कुछ इस तरह बताया : "इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन का काम मज़दूर वर्ग के स्वतःस्फूर्त आंदोलनों का संयोजन और सामान्यीकरण है, निर्देश देना या किसी भी सिद्धांत को थोपना नही।"

अलग अलग संघों और स्थानीय संभागों को प्रदत्त भरपूर स्वायत्तता के बावजूद इंटरनेशनल ने हमेशा ही राजनीतिक नेतृत्व का अधिकार बरकरार रखा। इसकी जनरल कौंसिल विभिन्न प्रवृत्तियों के एकताकारी संश्लेषक निकाय के रूप में काम करती थी और समूचे संगठन के लिए निर्देश जारी करती थी। अक्टूबर 1864 से अगस्त 1872 तक इसकी बैठकें काफी नियमित रहीं, 385 बार उसकी बैठक हुई। पाइप और सिगार के धुएं से भरे कमरे में जनरल कौंसिल के सदस्य मंगलवार की शाम को तमाम किस्म के मुद्दों पर बहस करते। मसलन काम के हालात, नई मशीनरी के असर, हड़तालों का समर्थन, ट्रेड यूनियनों की भूमिका और उनका महत्व, आयरलैंड का सवाल, विदेश नीति के तमाम मुद्दे, और भविष्य का समाज बनाने का तरीका। जनरल कौंसिल ही इंटरनेशनल के दस्तावेज तैयार करने के लिए जिम्मेदार थी : ये दस्तावेज थे–तात्कालिक उद्देश्य से जारी परिपत्र, चिट्ठी और प्रस्ताव; विशेष परिस्थिति के लिए खास घोषणापत्र, वक्तव्य और अपीलें।

4. इंटरनेशनल का निर्माण

इंटरनेशनल के जीवन में प्रमुख राजनीतिक घटनाओं तथा मुख्य सांगठनिक पड़ावों के बीच सहकालिकता न होने से इसका इतिहास कालानुक्रम में पुनर्निर्मित करना मुश्किल हो जाता है। सांगठनिक तौर पर प्रमुख पड़ाव थे : 1–इंटरनेशनल का जन्म (1864-66) इसकी स्थापना से पहली कांग्रेस (जेनेवा 1866) तक; 2–विस्तार का समय (1866-70); 3–क्रांतिकारी उभार और पेरिस कम्यून (1871-72) के बाद दमन; 4–विभाजन और संकट (1872-77)। बहरहाल सैद्धांतिक विकास के

लिहाज से प्रमुख पड़ाव थे : 1–इसके विभिन्न घटकों के बीच शुरुआती बहस और इसकी स्थापना (1864-65); 2–समूहवादियों और साझेदारीवादियों के बीच प्रभुत्व का संघर्ष (1866-69); 3–केंद्रवादियों और स्वायत्ततावादियों के बीच टकराव (1870-77)। आगे के पैराग्राफों में सांगठनिक और सैद्धांतिक दोनों पहलुओं को समेटा जाएगा।

ब्रिटेन में सबसे पहले इंटरनेशनल में शामिल होने का आवेदन हुआ; फ़रवरी 1865 में 4000 सदस्यों वाली ओपरेटिव सोसाइटी आफ़ ब्रिकलेयर्स को संबद्धता मिली, इसके बाद जल्दी ही निर्माण मज़दूरों और जूता बनाने वालों के संगठन जुड़े। अपने जीवनकाल के पहले साल में जनरल कौंसिल ने इंटरनेशनल के सिद्धांतों का प्रचार करने के लिए गंभीर गतिविधि शुरू की। इससे शुद्ध आर्थिक सवालों के पार अपना क्षितिज विस्तारित करने में इसे मदद मिली। इसे इस तथ्य से समझा जा सकता है कि फ़रवरी 1965 में स्थापित (चुनाव) सुधार लीग से जुड़े संगठनों में यह भी था।

फ़्रांस में इंटरनेशनल की यात्रा जनवरी 1865 में शुरू हुई जब पेरिस में इसका पहला प्रभाग स्थापित हुआ। ल्योन और सेन में अन्य बड़े केंद्र जल्दी ही प्रकट हुए। लेकिन इसकी ताकत बहुत सीमित रही, फ़्रांस की राजधानी में इसका आधार नहीं बढ़ सका और इस दौरान अनेक अन्य मज़दूर संगठन इससे बड़े बन गए। इंटरनेशनल का वैचारिक प्रभाव बेहद कम था और अन्य ताकतों के साथ इसके संबंध तथा इसकी राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी के चलते कोई राष्ट्रीय संघ स्थापित करना भी असंभव हो गया। फिर भी इंटरनेशनल के फ़्रांसिसी समर्थक जो अधिकतर प्रूधों के साझेदारी के सिद्धांतों के अनुयायी थे वे संगठन के पहले सम्मेलन में दूसरे सबसे बड़े समूह के रूप में स्थापित हुए। यह सम्मेलन लंदन में 25 से 29 सितंबर के बीच हुआ था और इसमें इंगलैंड, फ़्रांस, स्विट्ज़रलैंड, और बेल्जियम से 30 प्रतिनिधि शामिल हुए थे, जिनके साथ जर्मनी, पोलैंड और इटली के भी कुछ प्रतिनिधि थे। इनमें से सबने इंटरनेशनल की ओर से खासकर सांगठनिक स्तर पर उठाए गए प्रारम्भिक कदमों के बारे में सूचना दी। इस सम्मेलन ने अगली साल पहली आम कांग्रेस बुलाने का फैसला किया और वहां बहस के लिए प्रस्तावित मुद्दों की सूची बनाई।

इन दोनों जुटानों के बीच इंटरनेशनल का विस्तार यूरोप में जारी रहा तथा बेल्जियम और फ़्रांसिसी भाषी स्विट्ज़रलैंड में इसका पहला महत्वपूर्ण केंद्रक

स्थापित हुआ। संबद्धता संबंधी प्रशियाई कानून दूसरे देशों के संगठनों के साथ जर्मन राजनीतिक संघों के नियमित संपर्क पर प्रतिबंध लगाते थे इसलिए इसका मतलब था कि इंटरनेशनल तत्कालीन जर्मन संघ में कोई संभाग नहीं खोल सकता था। वहां इतिहास की पहली मज़दूर पार्टी जनरल एसोसिएशन आफ़ जर्मन वर्कर्स की स्थापना 1863 में हुई थी और उसके 5000 सदस्य थे। इसके नेता लासाल के शिष्य योहान्न बैप्टिस्ट फान श्वाइट्ज़र (1833-75) ओट्टो फान बिस्मार्क (1815-98) के साथ दुविधापूर्ण संवाद बनाए हुए थे और उन्होंने इंटरनेशनल के जीवन के शुरुआती सालों में इसमें कोई खास रुचि नहीं ली। ऐसी ही उदासीनता मार्क्स से राजनीतिक निकटता के बावजूद विलहेल्म लीबक्नेख्त (1826-90) ने भी दिखाई। स्विट्ज़रलैंड में इंटरनेशनल के प्रमुख नेताओं में से एक योहान्न फिलिप बेकर (1809-86) ने जेनेवा आधारित 'ग्रुप आफ़ जर्मन स्पीकिंग सेक्शंस' के जरिए इन कठिनाइयों के बीच रास्ता निकालने की कोशिश की और लंबे दिनों तक जर्मन संघ में वे ही शुरुआती इंटरनेशनल केंद्रक के संगठक रहे।

इस अग्रगति को इंटरनेशनल के विचारों के साथ सहानुभूति रखने वाले अखबारों या जनरल कौंसिल के सच्चे मुखपत्रों के प्रसार से बहुत समर्थन मिला। इन दोनों से वर्गीय चेतना के विकास में योगदान मिला और इंटरनेशनल की गतिविधि के समाचार तेजी से प्रचारित हुए। इसके जीवन के पहले कुछ सालों में जो अखबार निकले उनमें साप्ताहिक बी-हाइव और द माइनर ऐंड वर्कमैन'स एडवोकेट (बाद में द वर्कमैन'स एडवोकेट और फिर द कामनवेल्थ), दोनों लंदन से प्रकाशित; फ़्रांसिसी साप्ताहिक ल कूरिए इंतरनेशनल, लंदन से ही प्रकाशित; अगस्त 1865 से बेल्जियम में इंटरनेशनल का आधिकारिक पत्र ल त्रिब्यून द्यू पीपुल, स्विट्ज़रलैंड के फ़्रांसिसी भाषी संभाग का मुखपत्र जर्नल द लासोशिएं इंतरनेशनल; पेरिस से प्रकाशित प्रूधोंपंथी साप्ताहिक ल कूरिएं फ़्रांसुआं और जेनेवा में बेकर का डेर फ़ोरबोटे खास थे।

इंटरनेशनल के और अधिक सुदृढ़ीकरण के लिए लंदन में जनरल कौंसिल की गतिविधि निर्णायक थी। 1866 के वसंत में लंदन अमेल्गमेटेड टेलर्स की हड़ताल का समर्थन करके इसने पहली बार मज़दूरों के किसी संघर्ष में सक्रिय भूमिका निभाई जिसमें मिली सफलता के चलते दर्जियों की पांच सोसाइटियों ने इंटरनेशनल से जुड़ने का फैसला किया जिनमें प्रत्येक की सदस्य संख्या लगभग 500 थी। कुछ अन्य विवादों के सकारात्मक निपटारे के कारण ढेर सारी छोटी यूनियनें भी

आकर्षित हुईं। नतीजा यह निकला कि इसकी पहली कांग्रेस के समय तक सत्रह यूनियनें इससे संबद्ध हो चुकी थीं जिससे 25000 से अधिक नए सदस्य भर्ती हुए। इंटरनेशनल पहला ऐसा एसोसिएशन बना जो अपनी कतारों में ट्रेड यूनियन संगठनों को शरीक करने का कठिन काम पूरा कर सका।

जेनेवा शहर में 3 से 8 सितंबर तक इंटरनेशनल की पहली कांग्रेस संपन्न हुई। इसमें ब्रिटेन, फ़्रांस, जर्मनी और स्विट्ज़रलैंड से 60 प्रतिनिधि शरीक हुए थे। इंटरनेशनल के पास स्थापना के बाद दो सालों में गर्व करने लायक उपलब्धियों की फ़ेहरिस्त थी। इसने अपने झंडे तले 100 से अधिक ट्रेड यूनियनों और संगठनों को एकत्र कर लिया था। कांग्रेस में भाग ले रहे लोग मूल तौर पर दो खेमों में बांटे जा सकते थे। पहले खेमे में ब्रिटेन के प्रतिनिधि, कुछ जर्मन और ज्यादातर स्विस थे जो मार्क्स (जो जेनेवा में नहीं थे) द्वारा लिखित जनरल कौंसिल के निर्देशों पर अमल करते थे। दूसरा खेमा साझेदारीवादियों का था जिनमें फ़्रांसिसी प्रतिनिधि और कुछ फ़्रांसिसी भाषी स्विस थे। असल में उस समय इंटरनेशनल में यह रुख बहुत प्रचलित था और पेरिस निवासी हेनरी तोलें (1828-97) के नेतृत्व में साझेदारीवादियों ने ऐसे समाज की कल्पना प्रस्तुत की जिसमें कामगार एक ही साथ उत्पादक, पूंजीपति और उपभोक्ता होगा। वे सामाजिक रूपांतरण का निर्णायक उपाय ब्याज रहित ऋण प्रदान करना मानते थे; स्त्री श्रम को नैतिक और सामाजिक दृष्टिकोण से आपत्तिजनक समझते थे और काम के रिश्तों में किसी भी सरकारी हस्तक्षेप (काम के 8 घंटे तय करने सहित) का विरोध करते थे। इसका कारण वे यह बताते थे कि ऐसा होने से मज़दूरों और मालिकों के बीच के निजी रिश्तों पर खतरा पैदा होगा तथा वर्तमान व्यवस्था मजबूत होगी।

मार्क्स द्वारा तैयार प्रस्तावों के आधार पर जनरल कौंसिल के नेताओं ने कांग्रेस में संख्या के मामले में मजबूत साझेदारीवादियों के खेमे को शिकस्त देने में सफलता हासिल की और राजकीय हस्तक्षेप के पक्ष में बहुमत हासिल कर लिया। इस मुद्दे पर अस्थायी जनरल कौंसिल के प्रतिनिधियों के लिए निर्देश में 'किशोर और बाल श्रमिक (स्त्री पुरुष दोनों)' से जुड़े हुए अंश में मार्क्स ने साफ साफ लिखा था :

> "इसे तभी लागू किया जा सकता है जब सामाजिक विवेक को सामाजिक शक्ति में बदला जाए और वर्तमान स्थितियों में ऐसे आम कानून के सहारे इसे करने के सिवा अन्य कोई तरीका नहीं है जिस कानून को राज्य की शक्ति से मनवाया

जाएगा। ऐसे कानूनों को लागू करवाने में मज़दूर वर्ग सरकार की ताकत बढ़ा नहीं रहा होगा। इसके विपरीत जो ताकत इस समय उसके विरुद्ध इस्तेमाल होती है, उसे ही अपने अभिकरण के बतौर रूपांतरित करेगा। जिस चीज को वे ढेर सारे बिखरे हुए निजी प्रयासों के जरिए हासिल करने की व्यर्थ चेष्टा करते हैं उसे ही आम कानून के जरिए हासिल कर लेंगे।"

इस प्रकार बुर्जुआ समाज को मजबूत करने की बजाय (जैसा गलती से प्रूधों और उनके अनुयायी यकीन करते थे) ये सुधारात्मक मांगें मज़दूर वर्ग की मुक्ति का अपरिहार्य आरम्भिक कदम थीं।

इससे भी आगे, जेनेवा कांग्रेस के लिए लिखे मार्क्स के 'निर्देश' ट्रेड यूनियनों की बुनियादी भूमिका पर जोर दे रहे थे जिन ट्रेड यूनियनों का विरोध न केवल साझेदारीवादी बल्कि ब्रिटेन में राबर्ट ओवेन (1771-1885) के और जर्मनी में लासाल के कुछ अनुयायी करते थे :

"ट्रेड यूनियनों की यह गतिविधि न केवल उचित है, बल्कि जरूरी है। जब तक वर्तमान उत्पादन प्रणाली मौजूद है तब तक इसे छोड़ा नहीं जा सकता। इसके बरक्स सभी देशों में ट्रेड यूनियनों के निर्माण और संश्रय के जरिए इसे आम प्रवृत्ति बना देना होगा। दूसरी ओर अनजाने ही ट्रेड यूनियनें मज़दूर वर्ग के लिए संगठन केंद्र उसी तरह स्थापित कर रही थीं जिस तरह मध्ययुगीन म्युनिसपलिटियों तथा कम्यूनों ने पूंजीपति वर्ग के लिए संगठन केंद्र स्थापित किए थे। यदि ट्रेड यूनियनों की पूंजी तथा श्रम के बीच छापामार लड़ाई के लिए जरूरत पड़ती है तो वे संगठित शक्ति के रूप में मजूरी श्रम और पूंजी के शासन की व्यवस्था को समाप्त करने के लिए और भी महत्वपूर्ण हैं।"

इसी दस्तावेज में मार्क्स वर्तमान यूनियनों की आलोचना करने से भी नहीं चूके। क्योंकि वे

"पूंजी के विरुद्ध स्थानीय तथा तात्कालिक संघर्षों में ही खास तौर पर व्यस्त रहती हैं और इसलिए मजूरी गुलामी की व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष करने की अपनी ताकत को खुद ही अब तक पहचान नहीं सकी हैं। इसलिए उन्होंने अपने को आम सामाजिक और राजनीतिक आंदोलनों से बहुत दूर रखा है।"

ठीक एक साल पहले भी उन्होंने 20 और 27 जून को जनरल कौंसिल के समक्ष अपने भाषण में यही बातें कही थीं जो मरणोपरांत 'मज़दूरी, दाम और मुनाफ़ा' शीर्षक से छपा :

"मज़दूर वर्ग को इन रोजमर्रा के संघर्षों के अंतिम नतीजों को बढ़ा चढ़ाकर नहीं आंकना चाहिए। उन्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि वे परिणामों से लड़ रहे हैं, न कि उन परिणामों के कारणों से; कि वे पतन की गति को सिर्फ़ रोक रहे हैं, उसकी दिशा नहीं बदल रहे हैं; कि वे दर्द निवारक का इस्तेमाल कर रहे हैं, रोग का नाश नहीं कर रहे हैं। इसलिए उन्हें पूंजी के निरंतर आक्रमणों या बाजार के परिवर्तनों के कारण लगातार पैदा होने वाले अपरिहार्य गुरिल्ला संघर्षों में फंसकर नहीं रह जाना चाहिए। उन्हें समझना चाहिए कि मौजूदा व्यवस्था मज़दूरों पर ढाई जाने वाली तमाम मुसीबतों को पैदा करने के साथ ही समाज के आर्थिक पुनर्निर्माण के लिए आवश्यक भौतिक परिस्थितियों और सामाजिक रूपों को भी उत्पन्न करती है। इसलिए मज़दूरों को अपने झंडे पर 'वाजिब काम की वाजिब मज़दूरी' जैसे रूढ़ नारे की जगह यह क्रांतिकारी नारा लिख लेना चाहिए 'मजूरी व्यवस्था का नाश हो'।"

5. बढ़ती ताकत

1866 के उत्तरार्ध के बाद अनेक यूरोपीय देशों में हड़तालों में तेजी आई। मज़दूरों की भारी संख्या द्वारा संगठित इन हड़तालों ने उनमें अपने हालात की चेतना को जन्म दिया और संघर्षों की नई और महत्वपूर्ण लहर पैदा हुई।

हालांकि उस समय की कुछ सरकारों ने जन विक्षोभ के लिए इंटरनेशनल को दोषी ठहराया लेकिन उनमें शामिल अधिकांश मज़दूरों को इसके अस्तित्व के बारे में भी पता नहीं था; उनके विरोध प्रदर्शनों का मूल कारण काम और जीवन के कठिन हलात थे जिन्हें सहने के लिए वे मजबूर थे। फिर भी इन गोलबंदियों ने इंटरनेशनल के साथ सम्पर्क और संयोजन के नए दौर को जन्म दिया क्योंकि उसने एकजुटता की घोषणा और आवाहन के जरिए उनका समर्थन किया, हड़तालियों के लिए चंदा जुटाया और मालिकों द्वारा मज़दूरों के प्रतिरोध को कमजोर करने की कोशिशों का जवाब देने में मदद की।

इस दौर में इंटरनेशनल की व्यावहारिक भूमिका के चलते मज़दूरों ने उसे अपने हितों की रक्षा करने वाले संगठन के बतौर मानना शुरू किया और कुछेक मामलों में उससे जुड़ने की मांग की। इसके समर्थन से फ़रवरी-मार्च 1867 की पेरिस के तांबा मज़दूरों की हड़ताल में पहली जीत मिली। इसके साथ ही फ़रवरी 1867 में मार्शिएन के इस्पात मज़दूरों की हड़ताल, अप्रैल 1867 से फ़रवरी 1868

तक चलने वाला प्रोवेन्काल खनिज बेसिन का लंबा विवाद, 1868 के वसंत में चार्लेरोइ खनिकों की हड़ताल और जेनेवा के निर्माण मज़दूरों की हड़ताल भी सफल रहे। इन सभी घटनाओं में स्थिति एक समान ही रही : दूसरे देश के मज़दूरों ने हड़तालियों के समर्थन में चंदा जुटाया तथा उनके बदले में काम न करने का संकल्प किया अन्यथा वे भाड़े के औद्योगिक हत्यारे बन गए होते। इसके कारण मालिकों को हड़तालियों की अनेक मांगों पर समझौता करने के लिए मजबूर होना पड़ा। जो नगर कार्यवाही का केंद्र बने वहां इंटरनेशनल के सैकड़ों नए सदस्य भर्ती हुए। बाद में जनरल कौंसिल की एक रपट में कहा गया : 'इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन ने लोगों को हड़ताल में नहीं धकेला, बल्कि हड़तालों ने ही मज़दूरों को इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन की ओर ठेल दिया।'

इस तरह राष्ट्रीयता, भाषा और राजनीतिक संस्कृति संबंधी विविधताओं से जुड़ी हुई तमाम दिक्कतों के बावजूद इंटरनेशनल ने नाना प्रकार के संगठनों और स्वतःस्फूर्त संघर्षों के साथ एकता और संयोजन हासिल करने में सफलता पाई। इसका सबसे बड़ा गुण यह था कि इसने शुरुआती उद्देश्यों और रणनीतियों की आंशिकता से निर्णायक तौर पर परे जाकर वर्गीय एकजुटता और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की जरूरत को जाहिर कर दिया।

1867 के बाद से ही इन लक्ष्यों को हासिल करने की सफलता से प्राप्त मजबूती तथा व्यापक सदस्यता और अधिक सक्षम संगठन के बल पर इंटरनेशनल ने समूचे यूरोपीय महाद्वीप में अग्रगति बढ़ा दी। खासकर फ़्रांस में तो यह गतिरोध भंग का साल रहा जहां तांबा मज़दूरों की हड़ताल का वैसा ही उत्प्रेरक प्रभाव पड़ा जैसा प्रभाव इंगलैंड में दर्जियों की हड़ताल का पड़ा था। पेरिस में सदस्यों की संख्या 1000 के करीब पहुंच गई और ल्यों तथा विएन में सदस्य संख्या 500 के पार हो गई। भूमध्य सागर के दक्षिणी तट पर अल्जीयर्स (बहरहाल जिसमें केवल फ़्रांसिसी मज़दूर थे) समेत सात नए प्रभाग स्थापित हुए। बेल्जियम में भी हड़तालों के बाद संबद्धता में बढ़ोत्तरी आई तथा इसी तरह स्विट्ज़रलैंड में भी मज़दूरों की लीगों, सहकारी समितियों और राजनीतिक सोसाइटियों ने उत्साह के साथ जुड़ाव का आवेदन किया। अब इंटरनेशनल के केवल जेनेवा में 25 प्रभाग थे जिनमें जर्मन भाषी लोगों का वह प्रभाग भी था जो जर्मन संघ के मज़दूरों में प्रचार के लिए आधार का काम करता था।

लेकिन अब भी ब्रिटेन में ही इंटरनेशनल की उपस्थिति सबसे अधिक थी। 1867 के दौरान दर्जनों अन्य संगठनों की संबद्धता के चलते सदस्यता का आंकड़ा अच्छा खासा 50000 तक चला गया–ध्यान रखें कि सिर्फ़ दो साल में इसे हासिल किया गया था जबकि उस समय यूनियनों में संगठित मज़दूरों की कुल तादाद लगभग 800000 रही होगी। किसी भी अन्य देश में इंटरनेशनल की सदस्यता यह स्तर कभी नहीं छू सकी (अगर आबादी के अनुपात में नहीं तो संख्या के मामले में जरूर ही)। बहरहाल 1864-67 की चढ़ान के विपरीत बाद के सालों में ब्रिटेन में एक किस्म का ठहराव कायम रहा। इसकी ढेर सारी वजहें थीं लेकिन मुख्य वजह थी कि, जैसा हमने पहले देखा, इंटरनेशनल फ़ैक्ट्री उद्योगों या अकुशल श्रमिकों की दुनिया में पैठ नहीं बना सका। अकुशल श्रमिकों में एकमात्र अपवाद यूनाइटेड एक्सकेवेटर्स थे जिन्होंने अगस्त 1866 की हड़ताल के बाद संबद्धता ग्रहण की, जबकि उत्तरी और मध्यदेश के बड़े कारखानों में से सदस्यता लेने वाले बिरले संगठनों में से एक मेलेबल आयरनवर्कर्स था। इंटरनेशनल की आवाज न तो कोयला और सूती वस्त्र उद्योगों तक पहुंची, न ही इंजीनियरिंग के मज़दूर इससे जुड़े (जिन्होंने अपने तकनीकी कौशल के चलते कभी विदेशी प्रतियोगिता का खतरा महसूस नहीं किया)। इंटरनेशनल से सबसे अधिक तादाद में निर्माण मज़दूर जुड़े। 9000 सदस्यों वाली अमल्गेमेटेड सोसाइटी आफ़ कारपेंटर्स ऐंड ज्वाइनर्स के सचिव राबर्ट एपलग्राथ (1834-1924) जनरल कौंसिल के सदस्य थे और इसकी कुल सदस्यता के पांचवें हिस्से का प्रतिनिधित्व करते थे। इसके बाद दर्जी, मोची, बढ़ई, जिल्दसाज, फीता बुनकर, जाल बुनकर, जीनसाज और सिगार बनाने वाले थे–संक्षेप में ऐसे सभी व्यवसायों से जुड़े लोग जिनमें औद्योगिक क्रांति से खास बदलाव नहीं आया था। जनवरी 1867 में लंदन ट्रेड्स कौंसिल ने इंटरनेशनल के साथ सहयोग करने का फैसला किया लेकिन संबद्धता नहीं ग्रहण की। इससे जनरल कौंसिल को अहसास हो गया कि इसका विस्तार मौजूदा प्रभाव क्षेत्र के बाहर नहीं हो सकता।

मज़दूर आंदोलन के बढ़ते संस्थानीकरण ने इंटरनेशनल के जीवन की इस धीमी रफ़्तार में और भी इजाफा किया। रिफ़ार्म लीग के साथ लड़ी गई लड़ाई के चलते बने रिफ़ार्म ऐक्ट के कारण दस लाख से अधिक मज़दूरों को मताधिकार मिला। इसके बाद ट्रेड यूनियनों को कानूनी दर्जा मिल गया जिससे उत्पीड़न और दमन का खतरा खत्म हुआ तथा इससे समाज में इस चौथे खम्भे की असली मौजूदगी का अहसास होने लगा। नतीजा यह निकला कि देश के परिणामवादी

नेताओं ने सुधार के रास्ते पर चलना जारी रखा। मज़दूर वर्ग में अपने फ़्रांसिसी भाइयों के विपरीत शासन के साथ जुड़ाव का बोध गहराता गया क्योंकि उन्होंने भविष्य की अपनी ज्यादातर आशा शांतिपूर्ण बदलाव के साथ जोड़ दी। शेष महाद्वीप में हालात सचमुच बहुत अलग थे। जर्मन संघ में मज़दूरी के सवाल पर सामूहिक सौदेबाजी का सवाल ही नहीं था। बेल्जियम में हड़तालों को सरकार युद्ध की कार्यवाही मानकर कुचलती थी। हड़तालें स्विट्ज़रलैंड में तो अपवाद ही थीं जिन्हें बर्दाश्त करना स्थापित व्यवस्था के लिए मुश्किल था। फ़्रांस में घोषणा हुई थी कि 1864 से हड़तालें कानूनी हैं लेकिन आरम्भिक मज़दूर यूनियनों को कठोर प्रतिबंधों के तहत ही काम करना पड़ता था।

1867 की कांग्रेस की यही पृष्ठभूमि थी जिसमें व्यापक आधार पर निरंतर विस्तार से हासिल नई ताकत के साथ इंटरनेशनल एकत्र हुई। 'द टाइम्स' समेत कुछ पूंजीवादी अखबारों ने इसकी कार्यवाही देखने के लिए संवाददाता भेजे। कांग्रेस 2 से 8 सितंबर तक फिर से एक स्विस नगर लूसान में हुई। इसमें छह देशों से 64 प्रतिनिधि शामिल हुए (इनमें बेल्जियम और इटली से एक एक प्रतिनिधि भी थे)। चूंकि मार्क्स कैपिटल के प्रूफ़ देखने में व्यस्त थे इसलिए तैयारी के लिए लिखे दस्तावेजों के समय जनरल कौंसिल की बैठकों में और कांग्रेस में भी अनुपस्थित रहे। इसका असर साफ साफ महसूस किया गया जिसकी पुष्टि विभिन्न देशों में बढ़ोत्तरी की नीरस रपटों पर कांग्रेस का ध्यान केंद्रित रहने से होती है। इसके साथ ही प्रतिनिधियों की बहुसंख्या के साझेदारीवादी होने के चलते उनके पसंदीदा प्रूधोंपंथी विषयों (मसलन सहकारी आंदोलन और कर्ज का वैकल्पिक उपयोग) पर ज्यादा बातें हुईं।

इसके अलावे लीग फ़ार पीस ऐंड फ़्रीडम, जिसका स्थापना सम्मेलन इसके तुरंत बाद होने वाला था, के अनुरोध पर युद्ध और सैन्यवाद के सवाल पर भी बातचीत हुई। बहस के दौरान ही इंटरनेशनल के सर्वाधिक सक्रिय और प्रतिभाशाली सिद्धांतकारों में से एक ब्रसेल्स के प्रतिनिधि सेजार डि पाएपे (1841-90) ने वह सूत्र प्रस्तुत किया जो बाद में युद्ध के बारे में मज़दूर आंदोलन का शास्त्रीय मत बन गया कि 'पूंजीवादी व्यवस्था में युद्ध अपरिहार्य हैं'।

"अगर जेनेवा (शांति) कांग्रेस के लिए मुझे अपनी भावनाएं व्यक्त करनी हों तो कहूंगा : हम भी शांति से उतनी ही मुहब्बत करते हैं जितनी आप लेकिन हम जानते हैं कि जब तक राष्ट्रीयता या देशभक्ति का सिद्धांत मौजूद है, युद्ध होंगे; जब

तक अलग अलग वर्ग हैं, युद्ध होंगे। युद्ध महज किसी बादशाह की महात्वाकांक्षा का परिणाम नहीं होता.....युद्ध की असली वजह कुछ पूंजीपतियों के हित हैं। युद्ध आर्थिक जगत में असंतुलन का और राजनीतिक दुनिया में संतुलन के अभाव का परिणाम होते हैं।"

अंतिम बात कि स्त्री मुक्ति के सवाल पर बहस हुई और कांग्रेस ने एक रिपोर्ट के पक्ष में मतदान किया जिसमें कहा गया था कि 'यातायात और परिचालन के साधनों पर राजकीय स्वामित्व स्थापित करना विभिन्न देशों की कोशिशों का लक्ष्य होना चाहिए'। इंटरनेशनल की किसी कांग्रेस में अनुमोदित यह पहली समूहवादी घोषणा थी। बहरहाल साझेदारीवादी भू-स्वामित्व के समाजीकरण के पूरी तरह से विरोध में रहे और इस सवाल पर गहराई से बहस को अगली कांग्रेस तक के लिए टाल दिया गया।

6. प्रूधोंपंथियों की पराजय

इंटरनेशनल के एकदम शुरू के ही दिनों से फ़्रांस में, फ़्रांसिसी भाषी स्विट्ज़रलैंड में, वालोनिया में और ब्रसेल्स नगर में प्रूधों के विचारों का दबदबा था। उनके अनुयायियों, खासकर तोलें और अर्नेस्ट एडुवार्ड फ्रिबोर्ग (अज्ञात) ने 1864 की स्थापना बैठक, 1865 के लंदन सम्मेलन, जेनेवा और लूसान की कांग्रेसों में अपने विचारों के चलते छाप छोड़ी थी।

4 सालों तक ये साझेदारीवादी इंटरनेशनल के सर्वाधिक नरमदली रहे। संगठन में बहुमत वाली ब्रिटिश ट्रेड यूनियनें भी मार्क्स के पूंजीवाद विरोध से सहमत नहीं थीं लेकिन संगठन की नीतियों पर उनका वैसा प्रभाव नहीं था जैसा प्रभाव डालने में प्रूधों के अनुयायी सक्षम थे।

इस फ़्रांसिसी अराजकतावादी के सिद्धांतों के आधार पर साझेदारीवादियों का कहना था कि मज़दूरों की आर्थिक मुक्ति, उत्पादक सहकारी समितियों और जनता का एक केंद्रीय बैंक स्थापित करके हासिल की जा सकती है। किसी भी क्षेत्र में राजकीय हस्तक्षेप के प्रचंड विरोधी ये लोग जमीन और उत्पादन के साधनों के समाजीकरण का विरोध करने के साथ ही हथियार के रूप में हड़ताल के प्रयोग के भी विरोधी थे। उदाहरण के लिए 1868 में भी इंटरनेशनल के कई प्रभाग संघर्ष के इस रूप को नकारात्मक और अर्थतंत्र विरोधी मानते थे। इस मामले में हड़तालों

के बारे में लीग प्रभाग की रिपोर्ट प्रतीकात्मक थी : 'हड़ताल एक संघर्ष है। इसीलिए यह जनता और पूंजीपति वर्ग के बीच खदबदाती हुई नफ़रत को बढ़ा देती है। जिन दो वर्गों को एक दूसरे के साथ घुलना मिलना और एकताबद्ध होना चाहिए उन्हें एक दूसरे से और दूर ले जाती है।' जनरल कौंसिल की समझ और थीसिस से इससे अधिक दूरी शायद ही हो सकती थी।

बिना शक मार्क्स ने इंटरनेशनल में प्रूधों का प्रभाव घटाने के लिए चले लंबे संघर्ष में मुख्य भूमिका निभाई। इसके नेताओं के सैद्धांतिक विकास के लिए उनके विचार बुनियाद की तरह काम करते थे और संगठन के भीतर हरेक निर्णायक टकराव में जीत हासिल करके इन विचारों को बुलंद रखने की अद्‌भुत क्षमता का उन्होंने प्रदर्शन किया। उदाहरण के लिए सहकारिता के सिलसिले में उन्होंने 1866 में अस्थायी जनरल कौंसिल के प्रतिनिधियों के लिए निर्देश, विभिन्न प्रश्न में उन्होंने पहले ही घोषित किया :

> "सामाजिक उत्पादन को मुक्त तथा सहकारी श्रम की एक बड़ी तथा सामंजस्यपूर्ण व्यवस्था में बदलने के लिए आम सामाजिक परिवर्तनों की, समाज की सामान्य परिस्थितियों में बदलाव की जरूरत पड़ती है जिसे पूंजीपतियों तथा जमींदारों से छीनकर खुद उत्पादकों को, समाज की संगठित ताकतों को, यानी राजकीय सत्ता को सौंपे बिना कभी मूर्त नहीं किया जा सकता है।"

उन्होंने मज़दूरों को सलाह दी कि "वे सहकारी स्टोर की बजाय सहकारी उत्पादन पर ध्यान दें। सहकारी स्टोर वर्तमान आर्थिक व्यवस्था की सतह को ही छूता है जबकि सहकारी उत्पादन इसकी जड़ पर चोट करता है।" बहरहाल मज़दूर खुद ही प्रूधोंपंथी सिद्धांतों से परे हट रहे थे। सबसे आगे बढ़कर हड़तालों की बाढ़ ने साझेदारीवादियों की धारणा की गलती का उन्हें यकीन दिला दिया। सर्वहारा वर्ग के संघर्षों ने दिखा दिया कि हड़तालें वर्तमान हालात में सुधार के तात्कालिक साधन के बतौर तो जरूरी हैं ही, भविष्य के समाज निर्माण के लिए आवश्यक वर्गीय चेतना को भी मजबूत बनाती हैं। जीते जागते वास्तविक स्त्री-पुरुषों ने अपने अधिकारों और सामाजिक न्याय की मांग के लिए पूंजीवादी उत्पादन को रोक दिया और इस तरह इंटरनेशनल में तथा समूचे समाज में भी शक्ति संतुलन को बदल दिया। किसी भी सैद्धांतिक बहस के मुकाबले अधिक जोरदार तरीके से पेरिस के तांबा मज़दूरों, रूएं और ल्यों के बुनकरों तथा सेंट एटीन के कोयला खनिकों ने इंटरनेशनल के फ़्रांसिसी नेताओं को जमीन और उद्योगों के समाजीकरण

की जरूरत समझा दी। और मज़दूरों के आंदोलन ने दिखा दिया कि प्रूधों की मान्यताओं के विपरीत समाजार्थिक सवालों को राजनीतिक सवाल से अलगाया नहीं जा सकता।

1868 में 6 से 13 सितंबर तक ब्रसेल्स कांग्रेस संपन्न हुई। इसमें फ़्रांस, ब्रिटेन, स्विट्ज़रलैंड, जर्मनी, स्पेन (1 प्रतिनिधि) और बेल्जियम (पचपन) से कुल 99 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसी में अंतिम तौर पर साझेदारीवादियों के पंख कतर दिए गए। सबसे महत्वपूर्ण क्षण तब आया जब सदन ने उत्पादन के साधनों के समाजीकरण संबंधी डी पाएपे के प्रस्ताव का अनुमोदन कर दिया—इसके जरिए समाजवाद के आर्थिक आधार को परिभाषित करने के मामले में निर्णायक कदम आगे बढ़ाया गया। यह काम महज कुछ बुद्धिजीवियों के लेखन में नहीं हुआ था बल्कि एक महान अंतर्राष्ट्रीय संगठन के कार्यक्रम में इसे अपनाया गया था। खदानों और परिवहन के बारे में कांग्रेस ने घोषणा की :

1. कोयला खानें, अन्य खानें और खदानें तथा रेलवे सामान्य सामाजिक हालात में समुदाय की संपदा होने चाहिए, जिसका प्रतिनिधित्व राज्य करता है, उस राज्य को भी न्याय के कानून के अधीन होना चाहिए।
2. कोयला खानें, अन्य खानें और खदानें तथा रेलवे को राज्य वर्तमान व्यवस्था की तरह पूंजीपतियों की कंपनियों को नहीं, बल्कि कामगारों की कंपनियों को संचालन हेतु देगा जो अनुबंध के तहत समाज के लिए रेलवे आदि के तार्किक और वैज्ञानिक संचालन की गारंटी करेंगी और वह भी उस कीमत पर जो कामचलाऊ खर्च के जितना भी संभव हो उतना करीब हो। इसी अनुबंध के तहत राज्य के पास कंपनी का लेखा जोखा जांचने का भी अधिकार सुरक्षित होगा ताकि वह इजारेदारी के पुनर्गठन की किसी भी संभावना को देख सके। एक अन्य अनुबंध के जरिए कंपनियों के प्रत्येक सदस्य और उनके कामगारों के बीच आपसी अधिकारों की गारंटी होनी चाहिए।

भू-संपत्ति के मामले पर सहमति बनी कि :

"आधुनिक समाज के आर्थिक विकास के चलते खेती लायक जमीन को समाज की साझा संपत्ति में बदलने की सामाजिक आवश्यकता पैदा होगी, तथा राज्य की ओर से जमीन को भी कृषि कंपनियों को खानों और रेलवे के मामले में बताई गई शर्तों के अनुरूप शर्तों पर ही दिया जाएगा।"

नहरों, सड़कों और टेलीग्राफ पर भी यही बातें लागू होंगी :

"यह मानते हुए कि सड़कों और संचार के अन्य साधनों को भी साझी सामाजिक दिशा की जरूरत है कांग्रेस समझती है कि उन्हें भी समाज की साझा संपत्ति होना चाहिए।"

अंत में पर्यावरण के बारे में कुछ मजेदार बातें कही गईं :

"यह मानते हुए कि निजी हाथों में जंगलों को छोड़ देने से पेड़ों का विनाश होता है जो वसंत की संरक्षा के लिए और उसी क्रम में जमीन की उत्तम गुणवत्ता के लिए तथा साथ ही आबादी के स्वास्थ्य और जीवन के लिए जरूरी होते हैं, कांग्रेस समझती है कि जंगलों को समाज की साझा संपत्ति होना चाहिए।"

इस प्रकार ब्रसेल्स में इंटरनेशनल ने राजकीय प्राधिकार द्वारा उत्पादन के साधनों के समाजीकरण के बारे में पहली बार स्पष्ट वक्तव्य दिया। जनरल कौंसिल की यह महत्वपूर्ण जीत थी और एक बड़े मज़दूर संगठन के राजनीतिक कार्यक्रम में पहली बार समाजवादी सिद्धांत प्रकट हुए।

इसके अतिरिक्त कांग्रेस ने फिर से युद्ध के सवाल पर बहस की। बेकर ने एक प्रस्ताव पेश किया जिसे संक्षेप में मार्क्स ने बाद में कांग्रेस के प्रकाशित प्रस्तावों में शामिल भी किया, उसमें कहा गया :

"सभी युद्धों को खत्म करने में केवल मज़दूरों का स्पष्टतः तार्किक हित है, और यह हित आर्थिक और राजनीतिक, व्यक्तिगत और राष्ट्रीय है क्योंकि आखिरकार उन्हें ही अपने खून और मेहनत से लड़ने वालों के बीच जीत हार की कीमत चुकानी पड़ती है, चाहे वे जीतने वालों के देश के हों या हारने वालों के देश के।"

मज़दूरों का आवाहन किया गया कि वे सभी युद्धों को 'गृहयुद्ध' मानें। डी पाएपे ने इसके विरोध के लिए आम हड़ताल के इस्तेमाल की भी सलाह दी जिस प्रस्ताव को मार्क्स ने 'बेवकूफी' कहकर खारिज कर दिया लेकिन असल में जिसका मकसद ऐसी वर्ग चेतना को जन्म देना था जो केवल आर्थिक संघर्षों के परे जाने में सक्षम हो।

इंटरनेशनल का समूहवादी रुझान अगर ब्रसेल्स कांग्रेस से शुरू हुआ था तो अगले साल 5 से 12 सितंबर तक संपन्न बासेल कांग्रेस ने इसे और ठोस रूप दिया और प्रूधोंपंथ को उसके घरेलू मोर्चे फ़्रांस से भी उखाड़ फेंका। इस बार कांग्रेस में

प्रतिनिधियों की संख्या 78 थी जो केवल फ़्रांस, स्विट्ज़रलैंड, जर्मनी, ब्रिटेन और बेल्जियम से ही नहीं आए थे बल्कि विस्तार का प्रमाण देते हुए स्पेन, इटली और आस्ट्रिया से तथा अमेरिका से नेशनल लेबर यूनियन का भी एक प्रतिनिधि मौजूद थे। इस प्रतिनिधि तथा विलहेल्म लीबक्नेख्त (1826-1900) की मौजूदगी ने कांग्रेस को और शानदार बना दिया तथा इसमें आशा भर दी। लीबक्नेख्त मज़दूर वर्ग की पहली संगठित राजनीतिक शक्तियों के प्रतिनिधि थे (कुछ ही हफ़्ते पहले आइजेनबाख में स्थापित सोशल डेमोक्रेटिक वर्कर्स पार्टी आफ़ जर्मनी की ओर से)। इंटरनेशनल द्वारा पूंजी की सत्ता को चुनौती देने के लिए आवश्यक आधार क्षेत्र का साफ तौर पर विस्तार हो रहा था और कार्यवाही के दस्तावेजों तथा गतिविधियों के बारे में कांग्रेस के समक्ष प्रस्तुत आम रिपोर्टों से उपस्थित मज़दूरों में उत्साह का संचार हुआ।

भू-संपत्ति के बारे में ब्रसेल्स कांग्रेस के प्रस्तावों की फिर से पुष्टि की गई, पक्ष में 54, विपक्ष में 4 वोट पड़े और 13 प्रतिनिधियों ने मतदान में भाग नहीं लिया। फ़्रांसिसी प्रतिनिधियों में से यूजीन वार्लिन (1838-71) समेत, जो बाद में पेरिस कम्यून के प्रमुख व्यक्तित्व बने, ग्यारह ने एक नए पाठ का भी अनुमोदन किया जिसमें घोषित था 'कि समाज को अधिकार है कि वह जमीन का निजी मालिकाना खत्म कर दे और इसे समुदाय की संपत्ति बना दे।' इस पर दस प्रतिनिधि मतदान से अनुपस्थित रहे चार (तोलें समेत) ने विरोध में वोट दिया। बासेल के बाद फ़्रांस में इंटरनेशनल साझेदारीवादी नहीं रही।

बासेल कांग्रेस इस मामले में भी मजेदार थी कि मिखाइल बाकुनिन ने प्रतिनिधि के बतौर कार्यवाही में भाग लिया। लीग फ़ार पीस ऐंड फ्रीडम का नेतृत्व हासिल करने में नाकाम होने के बाद बाकुनिन ने जेनेवा में सितंबर 1868 में इंटरनेशनल एलायंस फ़ार सोशलिस्ट डेमोक्रेसी की स्थापना की और दिसंबर में इसने इंटरनेशनल में शामिल होने का आवेदन किया। शुरू में जनरल कौंसिल ने इसको खारिज कर दिया। कारण यह बताया कि इंटरनेशनल एलायंस फ़ार सोशलिस्ट डेमोक्रेसी अब भी एक अन्य समानांतर अंतर्राष्ट्रीय ढांचे से जुड़ा हुआ है और इसका एक लक्ष्य 'वर्गों में बराबरी' इंटरनेशनल के आधार स्तम्भ वर्ग उन्मूलन से पूरी तरह से भिन्न है। बहरहाल कुछ ही दिनों बाद एलायंस ने अपने कार्यक्रम में सुधार कर लिया और प्रभागों का अपना जाल बंद करने के लिए भी राजी हो गया जिनमें से अनेक वैसे भी सिर्फ़ बाकुनिन की कल्पना में मौजूद थे।

28 जुलाई 1869 को तदनुसार 104 सदस्यों वाला जेनेवा प्रभाग इंटरनेशनल में शामिल किया गया। मार्क्स बाकुनिन को अच्छी तरह से जानते थे लेकिन इस कदम के नतीजों को उन्होंने कम करके आंका था। क्योंकि इस मशहूर रूसी क्रांतिकारी का प्रभाव तेजी से कई स्विस, स्पेनी और फ्रांसिसी (तथा पेरिस कम्यून के बाद इतालवी भी) प्रभागों में फैला। बासेल कांग्रेस में अपने करिश्माई व्यक्तित्व और तर्क की जोरदार शैली की बदौलत उन्होंने बहस के नतीजों को प्रभावित करने में सफलता प्राप्त की। उदाहरण के लिए विरासत के अधिकार पर मतदान के समय प्रतिनिधियों ने पहली बार जनरल कौंसिल के प्रस्ताव को खारिज कर दिया। साझेदारीवादियों को आखिरकार शिकस्त देने और प्रूधों के भूत को दफ़नाने के बाद मार्क्स को अब एक और भी कठिन प्रतिद्वंद्वी का मुकाबला करना पड़ा जिसने समूहवादी अराजकतावाद की एक नई प्रवृत्ति को जन्म दिया और संगठन का नियंत्रण हासिल करना चाहा।

7. यूरोपव्यापी विकास और फ्रांको-प्रशियाई युद्ध का विरोध

1860 दशक का उत्तरार्ध और 1870 दशक का पूर्वार्ध सामाजिक टकरावों से भरा हुआ समय था। जिन ढेर सारे मज़दूरों ने विरोध प्रदर्शनों में भाग लिया उन्होंने इंटरनेशनल से संपर्क साधने का फैसला किया। इंटरनेशनल की कीर्ति चारों दिशाओं में फैल रही थी और सीमित साधनों के बावजूद जनरल कौंसिल ने अपने यूरोपीय प्रभागों के साथ एकजुटता की अपीलों का जवाब देने और चंदा एकत्र करने में कभी कोताही नहीं बरती। उदाहरण के लिए, मार्च 1869 में ऐसा ही हुआ जब बासेल में 8000 रेशम के रंगरेजों और फीता बुनकरों ने समर्थन की अपील की। जनरल कौंसिल अपने कोश से तो मात्र 4 पौंड ही भेज सकी लेकिन इसके द्वारा जारी सर्कुलर के चलते विभिन्न देशों में अनेक मज़दूर समूहों ने 300 पौंड एकत्र किया। इससे भी महत्वपूर्ण था न्यूकैसल के इंजीनियरिंग मज़दूरों का काम के घंटे 9 तक ही सीमित रखने का संघर्ष जिसमें इंटरनेशनल के भेजे दो दूतों, जेम्स कोन (कोहेन, अज्ञात) और इकारियस ने मालिकों द्वारा महाद्वीप से अन्य मज़दूर ले आने की कोशिशों को रोकने में प्रमुख भूमिका निभाई। इस हड़ताल की सफलता पूरे देश में समारोह में तब्दील हो गई और इससे अंग्रेज पूंजीपतियों को चेतावनी मिली। उसके बाद से उन्होंने समुद्र पार से मज़दूर भर्ती करना छोड़ दिया।

1869 में समूचे यूरोप में इंटरनेशनल का प्रचुर विस्तार हुआ। बहरहाल इस मामले में ब्रिटेन अपवाद रहा। अगस्त में बर्मिंघम में संपन्न ट्रेड्स यूनियन कांग्रेस ने संस्तुति की कि इसके सभी सदस्य संगठन इंटरनेशनल में शामिल हो जाएं। लेकिन यह अपील अनसुनी रही और संबद्धता का स्तर कमोबेश 1867 के समान ही रहा। हालांकि यूनियन के नेताओं ने साझेदारीवादियों के विरुद्ध मार्क्स का पूरी तरह साथ दिया लेकिन सैद्धांतिक मुद्दों के लिए उनके पास खास समय नहीं था और वे क्रांतिकारी तेवर में पगे भी नहीं। इसी कारण से मार्क्स लंबे समय तक जनरल कौंसिल से अलग इंटरनेशनल के ब्रिटिश संघ की स्थापना का विरोध करते रहे।

प्रत्येक यूरोपीय देश में जहां भी इंटरनेशनल थोड़ा मजबूत था उसके सदस्यों ने मौजूदा संगठनों से पूरी तरह स्वायत्त नए संगठनों को जन्म दिया, अपनी संख्या के मुताबिक स्थानीय प्रभाग बनाए और/या राष्ट्रीय संघों का निर्माण किया। बहरहाल ब्रिटेन में यूनियनें ही इंटरनेशनल की मुख्य ताकत थीं और स्वाभाविक रूप से उन्होंने अपने सांगठनिक ढांचों को बरकरार रखा। इसके अतिरिक्त लंदन स्थित जनरल कौंसिल को विश्व मुख्यालय और ब्रिटेन के लिए नेतृत्व के दो काम एक साथ करने होते थे। जो भी हो ट्रेड यूनियनों की संबद्धता के चलते इसके प्रभाव में लगभग 50000 मज़दूर थे जबकि उसी समय समूचे महाद्वीप में इटरनेशनल की अग्रगति जारी थी।

फ़्रांस में द्वितीय साम्राज्य की दमनकारी नीतियों के चलते 1868 का साल इंटरनेशनल के लिए गंभीर संकट का साल बन गया। एकमात्र रुएं को छोड़कर इसके सभी प्रभाग लुप्त हो गए। बहरहाल अगले साल संगठन को पुनर्जीवन मिला। बासेल कांग्रेस के बाद तोलें अब इसका नेता नहीं रह गया था, वार्लिन जैसे नए नेता जिन्होंने साझेदारीवाद से नाता तोड़ लिया था वे नेता बने। 1870 में इंटरनेशनल के विस्तार का चरम क्षण आया लेकिन उसकी असली सदस्य संख्या उस काल्पनिक संख्या से काफी कम थी जो कुछ लेखकों के दिमाग की उपज और लोगों में प्रचारित थी। यह बात भी याद रखनी चाहिए कि पर्याप्त वृद्धि के बावजूद संगठन फ़्रांस में उस समय मौजूद 90 विभागों में से 38 में जड़ें नहीं जमा सका था। यह संभव है कि पेरिस में सदस्यता 10000 तक पहुंच गई रही हो, जिसमें अधिकांश की संबद्धता सहकारी सोसाइटियों, ट्रेड एसोसिएशनों और प्रतिरोध सोसाइटियों के जरिए इंटरनेशनल से थी। कड़ाई से लगाए गए अनुमान रुएं और

ल्यों में तीन तीन हजार की संख्या का संकेत करते हैं (इन जगहों पर सितंबर 1870 में विद्रोह के फलस्वरूप जनता के कम्यून की घोषणा हुई थी जिसे बाद में रक्त में डुबा दिया गया)। इनके अतिरिक्त मार्सेलीज मे 4000 से कुछ अधिक सदस्य थे। पूरे देश में कुल सदस्य 30000 से कुछ अधिक होने का अनुमान है। इस तरह हालांकि फ़्रांस में इंटरनेशनल सही मायनों में जन संगठन नहीं बना फिर भी इसका आकार बड़ा था तथा इसमें व्यापक रुचि पैदा हुई थी। इसका अंदाजा हम जनरल कौंसिल को पोजीटिविस्ट प्रोलेतेरियन्स आफ़ पेरिस की ओर से सौंपे गए सदस्यता के आवेदन से लगा सकते हैं। 1870 के बाद से ब्लांकी के कुछ अनुयायियों ने भी प्रूधोंपंथी नरमदली प्रेरणा से बने संगठन के प्रति अपनी शुरुआती हिचक पर विजय पाई और मज़दूरों में इसके प्रति उत्साह देखकर खुद भी इसमें शामिल होना शुरू किया। निश्चय ही 1865 के बाद से काफी पानी बह चुका था जब तोलें और फ्रिबोर्ग द्वारा स्थापित इंटरनेशनल के फ़्रांसिसी प्रभागों को सम्मानजनक "अध्ययन सोसाइटी" जैसा कुछ समझा जाता था। फ़्रांस में संगठन के निर्देश अब सामाजिक टकराव और राजनीतिक गतिविधि को बढ़ावा देने पर केंद्रित होते थे।

बेल्जियम में 1868 की ब्रसेल्स कांग्रेस के बाद का समय संघाधिपत्यवाद के उदय, अनेकानेक विजयी हड़तालों और इंटरनेशनल से ढेर सारी मज़दूर सोसाइटियों की संबद्धता का समय था। 1870 दशक के पूर्वार्ध में सदस्य संख्या बढ़कर दसियों हजार तक पहुंच गई, शायद समूचे फ़्रांस की सदस्य संख्या को भी पार कर गई। इसी देश में इंटरनेशनल कुल आबादी में सदस्यों की सघनता तथा समाज में प्रभाव के मामले में सर्वोच्च स्थिति में पहुंचा।

स्विट्ज़रलैंड में भी इस दौरान सकारात्मक विकास दिखाई पड़ा। 1870 में कुल सदस्य संख्या 6000 थी (कुल लगभग 700000 कामगारों में), जिसमें जेनेवा के 34 प्रभागों के 2000 और जूरा इलाके से 800 सदस्य शामिल हैं। बहरहाल कुछ ही दिनों बाद बाकुनिन की गतिविधियों ने संगठन को दो बराबर हिस्सों में बांट दिया। अप्रैल 1870 में रोमान्डे फ़ेडरेशन की कांग्रेस में दोनों हिस्सों का टकराव ठीक इसी सवाल पर हुआ कि इंटरनेशनल एलायंस फ़ार सोशलिस्ट डेमोक्रेसी को फ़ेडरेशन में शामिल किया जाए या न किया जाए। जब सिद्ध हो गया कि दोनों पक्षों में कोई समझौता होना असंभव है तो दो समानांतर कांग्रेसों की कार्यवाही चलती रही। जनरल कौंसिल के हस्तक्षेप के बाद ही सुलह करने पर सहमति हुई।

लंदन से जुड़ा हुआ समूह थोड़ा छोटा तो था लेकिन रोमान्डे फ़ेडरेशन नाम उसी के हिस्से आया। बाकुनिन से जुड़े हुए समूह को जूरा फ़ेडरेशन नाम अपनाना पड़ा हालांकि इंटरनेशनल के साथ इसको फिर से संबद्धता प्रदान कर दी गई।

रोमान्डे फ़ेडरेशन के नेता निकोलाई उतिन (1845-83), जिन्होंने जेनेवा में इंटरनेशनल के पहले रूसी प्रभाग की स्थापना की थी, और जोहान्न फिलिप बेकर थे जिन्होंने 1868 की गर्मियों से लेकर फ़रवरी 1870 तक बाकुनिन के साथ जुड़ाव के बावजूद ध्यान रखा कि समूचा स्विस संगठन उनके हाथों में न चला जाए। जो भी हो, जूरा फ़ेडरेशन की मजबूती से इंटरनेशनल के भीतर अराजक-संघाधिपत्यवादी धारा के निर्माण के महत्वपूर्ण दौर का पता चलता है। इसके सबसे प्रमुख व्यक्तित्व युवा जेम्स गिलौमे (1844-1916) थे जिन्होंने लंदन के साथ विवाद में मुख्य भूमिका निभाई।

इस दौर में बाकुनिन के विचार अनेक नगरों में फैलना शुरू हुए। खासकर वे दक्षिण यूरोप में फैले लेकिन जिस देश में वे सबसे तेजी से पनपे वह था स्पेन। असल में आइबेरियाई द्वीप समूह में इंटरनेशनल का विकास पहली बार नेपल्स के अराजकतावादी जिसेप फ़नेली की गतिविधियों के जरिए हुआ जिसने बाकुनिन के अनुरोध पर अक्टूबर 1868 से वसंत 1869 के बीच इंटरनेशनल के प्रभागों और एलायंस फ़ार सोशलिस्ट डेमोक्रेसी (जिसका वह सदस्य था) के समूहों की स्थापना में मदद के लिए बार्सिलोना और मैड्रिड की यात्राएं कीं। उसकी यात्राओं का मकसद पूरा हुआ। लेकिन उसने अक्सर सभी व्यक्तियों को एक साथ दोनों अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के दस्तावेज पढ़ने के लिए दिए। यह तरीका तत्कालीन बाकुनिनवादी भ्रम और सैद्धांतिक संग्रहवाद का अच्छा नमूना है। स्पेनी मज़दूरों ने इंटरनेशनल की स्थापना एलायंस फ़ार सोशलिस्ट डेमोक्रेसी के सिद्धांतों के साथ की। फिर भी फ़नेली ने अनसेल्मो लोरेन्ज़ो (1841-1914) जैसे महत्वपूर्ण कार्यकर्ताओं को इंटरनेशन की ओर खींच लाने सफलता पाई। पहले लोरेन्ज़ो ने प्रूधों की किताबें पढ़ी थीं जिनका स्पेनी अनुवाद भविष्य के स्पेनी राष्ट्रपति फ़्रांसिस्को पी वाइ मार्गल (1824-1901) ने किया था। हालांकि इंटरनेशनल के विचारों का ढेर सारा मिलावटी रूप प्रचारित था फिर भी वे संगठित होने और संघर्ष के लिए उत्सुक पंख तौल रहे मज़दूर आंदोलन तक पहुंचने में कामयाब रहे। बासेल कांग्रेस में स्पेनी प्रतिनिधि रफ़ाएल फ़ार्गा पेलिकेर (1840-90) ने दर्जनों प्रभागों की मौजूदगी की बात बताई।

उत्तरी जर्मन महासंघ में मज़दूर आंदोलन के दो राजनीतिक संगठनों—लासालपंथी जनरल एसोसिएशन आफ़ जर्मन वर्कर्स और मार्क्सवादी सोशल डेमोक्रेटिक वर्कर्स पार्टी आफ़ जर्मनी—की मौजूदगी के बावजूद इंटरनेशनल को लेकर कोई उत्साह नहीं था तथा इससे जुड़ने के लिए भी बहुत कम अनुरोध आए। इसके शुरुआती तीन सालों में जर्मन लड़ाकुओं ने अधिकारियों द्वारा दमन के भय से वस्तुतः इसके अस्तित्व की उपेक्षा की। लेकिन 1868 के बाद तस्वीर कुछ हद तक बदली जब इंटरनेशनल की ख्याति और सफलता की गूंज पूरे यूरोप में व्याप्त हो गई। उसके बाद से दोनों प्रतिद्वंद्वी पार्टियां इसकी जर्मन शाखा का प्रतिनिधित्व करना चाहने लगीं। लासालपंथियों के नेता जोहान्न बाप्टिस्ट फ़ोन श्वाइट्ज़र (1833-75) ने अपने जनरल एसोसिएशन को इंटरनेशनल से संबद्ध करने का आवेदन कभी नहीं दिया इसलिए उनके विरोध में लीबक्नेख्त ने मार्क्स के विचारों से अपने संगठन की निकटता का सहारा लेना चाहा लेकिन इंटरनेशनल के साथ उनके संगठन सोशल डेमोक्रेटिक वर्कर्स पार्टी आफ़ जर्मनी की संबद्धता वास्तविक की बजाय औपचारिक (या एंगेल्स के शब्दों में एकतरफ़ा) ही थी जिसमें भौतिक और वैचारिक प्रतिबद्धता न्यूनतम थी। इसकी स्थापना के एक साल के भीतर पंजीकृत इसके लगभग 10000 सदस्यों में से निजी तौर पर एकाध सौ ने ही इंटरनेशनल की सदस्यता ली (संबद्धता के प्रशियाई कानूनों के तहत यही प्रक्रिया मान्य थी)। कहा जा सकता है कि जर्मनी में इंटरनेशनल की धीमी प्रगति के लिए किसी भी कानूनी बाध्यता के मुकाबले जर्मन लोगों की कमजोर अंतर्राष्ट्रीयता की भावना अधिक जिम्मेदार थी और 1870 के उत्तरार्ध में उसमें ह्रास ही आया क्योंकि आंदोलन भी आंतरिक मसलों में ज्यादा उलझा रहा।

जर्मनी की कमजोरी की भरपाई दो अच्छी खबरों से हुई। मई 1869 में नीदरलैंड में इंटरनेशनल के पहले प्रभागों की स्थापना हुई तथा एम्सटर्डम और फ्रीसलैंड में उनका धीरे धीरे विकास शुरू हुआ। इसके बाद जल्दी ही इटली में भी इंटरनेशनल ने दस्तक दी जहां पहले यह कुछेक केंद्रों में ही मौजूद थी जिनका आपस में बहुत कम या कोई सम्पर्क नहीं था।

इससे भी अधिक या कम से कम प्रतीकात्मक तथा आशाजनक खबर अटलांटिक के दूसरे किनारे की हलचलों की थी जहां हाल के वर्षों में पहुंचे हुए प्रवासियों ने संयुक्त राज्य में इंटरनेशनल के पहले प्रभागों की स्थापना शुरू की। बहरहाल संगठन जन्म से ही दो कमजोरियों से ग्रस्त था जिनसे उसे कभी मुक्ति

नहीं मिली। लंदन से बार बार प्रेरित किए जाने के बावजूद यह न तो विभिन्न संबद्ध समूहों की राष्ट्रवादी प्रकृति से ऊपर उठ सका और न ही नई दुनिया में जन्मे मज़दूरों को अपनी ओर खींच सका। दिसंबर 1870 में जब उत्तरी अमेरिका के लिए इंटरनेशनल की केंद्रीय कमेटी की स्थापना जर्मन, फ़्रांसिसी और चेक प्रभागों ने की तो यह इंटरनेशनल के इतिहास में इस मामले में विचित्र थी कि इसमें केवल 'विदेश में जन्मे' सदस्य थे। इस असंगति का सबसे खटकने वाला पहलू यह था कि संयुक्त राज्य में इंटरनेशनल कभी अंग्रेजी भाषा में पत्र नहीं निकाल सका।

यूरोप के बीचोबीच टकराव का मतलब यह था कि तत्कालीन राष्ट्रवादी लफ़्फ़ाजी से अलग मज़दूर आंदोलन को स्वतंत्र रुख अपनाने में मदद करना सबसे बड़ी प्राथमिकता हो गई। फ़्रांको-प्रशियाई युद्ध के सवाल पर अपने पहले संबोधन में मार्क्स ने फ़्रांसिसी मज़दूरों का आवाहन किया कि वे लुई बोनापार्त (1808-73) को भगा दें और 18 साल पहले उसके द्वारा स्थापित साम्राज्य को मिटा दें। दूसरी ओर जर्मन मज़दूरों की जिम्मेदारी थी कि वे बोनापार्त की पराजय को फ़्रांसिसी जनता पर हमले में बदल जाने से रोकें :

> "आर्थिक परेशानी और राजनीतिक विभ्रम वाले पुराने समाज के विपरीत एक नया समाज पैदा हो रहा है जिसका अंतर्राष्ट्रीय नियम शांति होगा क्योंकि इसका राष्ट्रीय शासक सर्वत्र श्रमिक ही होगा। इस नए समाज का अग्रदूत इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन है।"

इस दस्तावेज की 30000 प्रतियां (जेनेवा में छपी 15000 जर्मनी और 15000 फ़्रांस के लिए) विदेश नीति के मसले पर इंटरनेशनल का पहला महत्वपूर्ण वक्तव्य हैं। इसके समर्थन में उत्साह के साथ बोलने वाले अनेक लोगों में से एक जान स्टुआर्ट मिल (1806-73) थे। उन्होंने लिखा : 'इसमें एक भी शब्द ऐसा नहीं है जो इसमें नहीं होना चाहिए था। इससे कम शब्दों में यह बात कही भी नहीं जा सकती थी।'

सोशल डेमोक्रेटिक वर्कर्स पार्टी के नेता विलहेल्म लीबक्नेख्त और आगस्त बेबेल (1840-1913) ही उत्तरी जर्मन महासंघ के ऐसे दो संसद सदस्य थे जिन्होंने युद्ध के लिए विशेष बजट पर वोट देने से इनकार किया और इंटरनेशनल के फ़्रांस स्थित प्रभागों ने जर्मन मज़दूरों के लिए दोस्ती और एकजुटता के संदेश भेजे। फिर

भी फ़्रांस की पराजय ने यूरोप में राष्ट्र-राज्यों के, उनके अंधराष्ट्रवाद समेत, नए और अधिक शक्तिशाली युग के जन्म पर मुहर लगा दी।

8. इंटरनेशनल और पेरिस कम्यून

सेदान में जर्मनी की जीत और बोनापार्त की धर पकड़ के बाद 4 सितंबर 1870 को फ़्रांस में तीसरे रिपब्लिक की घोषणा हुई। अगले साल के जनवरी माह में पेरिस की 4 महीने की घेरेबंदी का अंत फ़्रांस द्वारा बिस्मार्क की शर्तों की मंजूरी के साथ हुआ। इसके बाद के युद्ध विराम के दौरान चुनाव हुए और एडोल्फ़ थिएर (1797-1877) की नियुक्ति रिपब्लिक के राष्ट्रपति के रूप में हुई जिसे लेजिटिमिस्टों और ओरलियनिस्टों का विराट समर्थन प्राप्त था। बहरहाल राजधानी में प्रगतिशील-गणतंत्रवादी ताकतों का बोलबाला था और जनता में व्यापक विक्षोभ की लहर थी। नगर को निःशस्त्र करने और सुधारों को मुल्तवी रखने की इच्छा वाली सरकार का सामना होने पर पेरिसवासियों ने थिएर के विरुद्ध मोर्चा खोला और 18 मार्च को मज़दूर आंदोलन के जीवन की पहली महान राजनीतिक घटना, पेरिस कम्यून का आगाज कर दिया।

हालांकि बाकुनिन ने मज़दूरों से देशभक्ति के युद्ध को क्रांतिकारी युद्ध में बदल देने की प्रार्थना की लेकिन लंदन में जनरल कौंसिल ने शुरू में चुप्पी बरती। इसने मार्क्स को इंटरनेशनल की ओर से कोई दस्तावेज लिखने की जिम्मेदारी दी लेकिन किन्ही निजी जटिल कारणों से इसके प्रकाशन को स्थगित रखा। जमीनी स्तर पर वास्तविक शक्ति संतुलन के बारे में उन्हें अच्छी तरह से खबर थी तथा पेरिस कम्यून की कमजोरियों को भी वे जानते थे इसलिए उन्हें पता था कि इसकी पराजय निश्चित है। सितंबर 1870 में ही फ़्रांको-प्रशियाई युद्ध के बारे में अपने दूसरे अभिभाषण में उन्होंने फ़्रांसिसी मज़दूर वर्ग को चेतावनी देने की कोशिश की थी :

> "वर्तमान संकट में जबकि दुश्मन पेरिस के दरवाजे पर दस्तक दे रहा है तो नई सरकार को हटाने की कोई भी कोशिश हताशा भरी बेवकूफी होगी। फ़्रांसिसी मज़दूरों को...1792 के राष्ट्रीय स्मारकों द्वारा खुद को बहा ले जाने से...बचना चाहिए। उन्हें अतीत को जगाना नहीं है, बल्कि भविष्य बनाना है। उन्हें शांति के साथ दृढ़तापूर्वक अपने वर्गीय संगठन के लिए गणतांत्रिक स्वतंत्रता से हासिल अवसरों का लाभ उठाना है। इससे उन्हें फ़्रांस के नवजागरण के लिए

तथा हमारी साझा जिम्मेदारी यानी मज़दूरों की मुक्ति के लिए अपार नई शक्ति का उपहार मिलेगा। उन्हीं की ऊर्जा और विवेक पर गणतंत्र का भाग्य टिका हुआ है।"

पेरिस कम्यून की जीत की उत्तेजक घोषणा से यूरोप भर के मज़दूरों में झूठी आशा पैदा होने का खतरा था जिससे आखिरकार मनोबल में गिरावट आती और अविश्वास फैलता। इसलिए मार्क्स ने किताब लिखना टाला और कई हफ़्तों तक जनरल कौंसिल की बैठकों से दूर रहे। उनकी ये आशंकाएं जल्दी ही सही साबित हुईं और 28 मई को पेरिस कम्यून की घोषणा के दो महीने के कुछ ही दिन बाद इसे खून में डुबा दिया गया। दो दिन बाद वे जनरल कौंसिल के सामने फ़्रांस में गृहयुद्ध शीर्षक वाली पांडुलिपि के साथ प्रकट हुए। इसका वाचन हुआ और सर्वसम्मति से इसका अनुमोदन किया गया। जनरल कौंसिल के सभी सदस्यों के नाम पर इसका प्रकाशन हुआ। अगले कुछ हफ़्तों के दौरान इस दस्तावेज का भारी असर पड़ा, उन्नीसवीं सदी के मज़दूर आंदोलन के किसी भी अन्य दस्तावेज से अधिक। एक के बाद एक धड़ाधड़ तीन अंग्रेजी संस्करणों ने मज़दूरों में भरपूर प्रशंसा पाई तो पूंजीवादी हलकों में चीख पुकार मच गई। इसका पूरा या आंशिक अनुवाद अन्य दर्जनों भाषाओं में हुआ जो विभिन्न यूरोपीय देशों और संयुक्त राज्य में अखबारों, पत्रिकाओं तथा पुस्तिकाओं में छपा।

मार्क्स द्वारा भावावेगपूर्ण औचित्यसिद्धि तथा प्रतिक्रियावादी विरोधियों के दावों और कठमुल्ला मार्क्सवादियों द्वारा इंटरनेशनल के गौरवान्वयन की उत्सुक कोशिशों के बावजूद इस बात का सवाल ही नहीं पैदा होता कि जनरल कौंसिल ने असल में पेरिस विद्रोह की प्रेरणा दी होगी। संगठन के प्रमुख व्यक्तियों ने जरूर एक भूमिका निभाई। उदाहरण के लिए लियो फ़्रांकेल (1844-96) को हंगरी में पैदा होने के बावजूद श्रम, उद्योग और व्यापार की जिम्मेदारी दी गई थी लेकिन पेरिस कम्यून का नेतृत्व क्रांतिकारी जैकोबिन पक्ष के हाथों में था। 26 मार्च को संपन्न म्युनिसिपल चुनावों में निर्वाचित 85 प्रतिनिधियों में 15 नरमदली (तथाकथित 'पार्ती देस मायेर', पेरिस के प्रशानिक जिलों के पूर्व मेयरों का समूह) और चार क्रांतिकारी थे। इन क्रांतिकारियों ने तुरंत ही इस्तीफ़ा दे दिया था और कभी कम्यून की कौंसिल के अंग नहीं बने। बचे हुए 66 लोगों में से 11 की कोई स्पष्ट राजनीतिक प्रतिबद्धता नहीं थी, 14 लोग नेशनल गार्ड की कमेटी से थे, 15 क्रांतिकारी-गणतंत्रवादी तथा समाजवादी थे। इसके अतिरिक्त 9 ब्लांकीपंथी और

इंटरनेशनल के 17 सदस्य थे। इंटरनेशनल के सदस्य थे—एडुआर्ड वैलें (1840-1915), बेनोई मालों (1841-93), अगस्त सेरेले (1840-72), ज्यां-लुई पिंडी (1840-1917), अलबर्ट थिएज़ (1839-81), चार्ल्स लांग्वे (1839-1903) और पूर्वकथित वार्लिन तथा फ़्रांकेल। बहरहाल विभिन्न राजनीतिक पृष्ठभूमि और अलग अलग संस्कृति से संबद्ध वे लोग कोई एकाश्मीय समूह कतई नहीं थे और अक्सर भिन्न भिन्न तरीके से वोट डालते थे। इसके कारण भी जैकोबिनीय क्रांतिकारी गणतंत्रवादी परिप्रेक्ष्य का दबदबा था। इसकी अभिव्यक्ति मई में मोंतान्यार्द नामक राजनीतिक दल की प्रेरणा से कमेटी फ़ार पब्लिक सेफ़्टी बनाने के फैसले (ब्लांकीपंथियों समेत दो तिहाई जनरल कौंसिल द्वारा अनुमोदित) में होती है। खुद मार्क्स ने भी कहा था कि 'कम्यून का बहुमत किसी भी मायने में समाजवादी नहीं था, न ही हो सकता था।'

'खूनी सप्ताह' (21-28 मई) के दौरान लगभग 10000 कम्युनार्ड या तो लड़ते हुए मारे गए या उन्हें मौत की सजा दी गई; फ़्रांस के इतिहास का यह सबसे खूनी जनसंहार था। इसके बाद पेरिस में वेर्साई के झुंड टूट पड़े। 43000 या इससे ज्यादा दूसरे लोगों को बंदी बना लिया गया। उनमें से 13500 को मौत की सजा, कैद, जबरिया श्रम या निर्वासन (अनेक को सुदूर न्यू केलेडोनिया उपनिवेश में) दिया गया। अन्य 7000 भागने में कामयाब रहे और उन्होंने इंगलैंड, बेल्जियम या स्विट्ज़रलैंड में शरण ली। यूरोपीय रूढ़िवादी और उदारवादी अखबारों ने थिएर के सैनिकों का काम पूरा किया, कम्युनार्डों पर घिनौने अपराधों का आरोप लगाया और बदतमीज मज़दूरों के विद्रोह पर 'सभ्यता' की जीत की खुशी मनाई। इसके बाद से इंटरनेशनल सारी हलचलों के केंद्र में आ गया, स्थापित व्यवस्था के विरुद्ध प्रत्येक काम के लिए उसे ही दोषी ठहराया जाता। मार्क्स ने तीखी विडंबना के साथ लिखा 'जब शिकागो का भयंकर अग्निकांड हुआ तो पूरी दुनिया में टेलीग्राफ ने इसे इंटरनेशनल का नारकीय कृत्य घोषित किया और यह सचमुच आश्चर्यजनक है कि वेस्ट इंडीज को बरबाद कर देने वाले तूफान को इस पैशाचिक संगठन के मत्थे नहीं मढ़ा गया।'

मार्क्स को पूरा पूरा दिन इंटरनेशनल और खुद के बारे में अखबार में छपी निंदा का जवाब देने में बिताना पड़ता था : उन्होंने लिखा कि मैं 'इस समय लंदन का सबसे अधिक निंदित और खतरनाक व्यक्ति हूं।' इस बीच यूरोप की सारी सरकारों ने दमन के अपने उपाय पैने कर लिए, इस भय से कि पेरिस में हुए

विद्रोह के बाद अन्य जगहों पर भी विद्रोह हो सकते हैं। थिएर ने तुरंत ही इंटरनेशनल को गैर कानूनी घोषित कर दिया और ब्रिटेन के प्रधानमंत्री एवार्ट ग्लैडस्टोन (1809-98) से ऐसा ही करने को कहा। किसी भी मज़दूर संगठन के बारे में यह पहला राजनयिक संवाद था। नवें पोप (1792-1878) ने ऐसा ही दबाव स्विस सरकार पर डाला और तर्क दिया कि 'उस इंटरनेशनल पंथ को' बरदाश्त करना गंभीर गलती होगी 'जो समूचे यूरोप के साथ वैसा ही बरताव करना चाहेगा जैसा उसने पेरिस के साथ किया है। इन सज्जनों से...खौफ़ खाना चाहिए क्योंकि वे ईश्वर और मानवता के आंतरिक शत्रुओं की ओर से काम कर रहे हैं।' ऐसी भाषा का नतीजा यह निकला कि फ़्रांस और स्पेन ने पाइरेनीज के पार के शरणार्थियों की अदला बदली पर तथा बेल्जियम और डेनमार्क में इंटरनेशनल का दमन करने का समझौता कर लिया। लंदन ने तो राजनीतिक शरण संबंधी अपने सिद्धांतों का उल्लंघन न करते हुए कदम वापस खींच लिए लेकिन जर्मन और आस्ट्रो-हंगारी सरकारों के प्रतिनिधि नवंबर 1872 में बर्लिन में मिले और 'सामाजिक सवाल' पर उन्होंने संयुक्त वक्तव्य जारी किया :

1. कि इंटरनेशनल की प्रवृत्तियां पूंजीवादी समाज के सिद्धांतों से पूरी तरह अलग और उनके विरोध में हैं इसलिए उन्हें कड़ाई से रोकना होगा;
2. कि इंटरनेशनल इकट्ठा होने की आजादी का खतरनाक दुरुपयोग कर रहा है और इसके अपने व्यवहार और सिद्धांत के अनुरूप इसके विरुद्ध राजकीय कार्यवाही भी अंतर्राष्ट्रीय स्तर की ही होनी चाहिए और इसीलिए उसे सभी सरकारों की एकजुटता पर आधारित होना चाहिए;
3. कि यदि कुछ सरकारें (इंटरनेशनल के विरुद्ध) फ़्रांस की तरह विशेष कानून नहीं बनाना चाहें तो भी इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन और इसकी नुकसानदेह कार्यवाहियों का आधार खत्म कर देना चाहिए।

आखिरकार इटली भी इस हमले से अछूता नहीं रहा। मैज़िनी कुछ समय से इंटरनेशनल की ओर आशा भरी निगाहों से देख रहा था। उसने भी माना कि इसके सिद्धांत 'ईश्वर,.... पितृभूमि,....और समूची निजी संपत्ति को नकारते' हैं।

पेरिस कम्यून की आलोचना मज़दूर आंदोलन के भी कुछ हिस्सों तक फैल गई। 'फ़्रांस में गृहयुद्ध' के प्रकाशन के बाद ट्रेड यूनियन नेता जार्ज ओडगर और पुराने चार्टिस्ट नेता बेंजामिन लुक्राफ़्ट (1809-97) ने अखबारों के शत्रुतापूर्ण अभियान के दबाव में झुककर इंटरनेशनल से इस्तीफ़ा दे दिया। बहरहाल किसी

भी ट्रेड यूनियन ने संगठन से अपना समर्थन वापस नहीं लिया। इससे एक बार फिर पुष्ट हो गया कि इंटरनेशनल की बढ़ोत्तरी ब्रिटेन में न होने का मुख्य कारण मज़दूर वर्ग की राजनीतिक उदासीनता थी।

पेरिस में खूनी पटाक्षेप और यूरोप भर में निंदा की लहर तथा सरकारी दमन के बावजूद पेरिस कम्यून के बाद इंटरनेशनल मजबूत और ज्यादा विख्यात हुआ। पूंजीपतियों और मध्यवर्गी लोगों की नजर में इंटरनेशनल स्थापित व्यवस्था के लिए खतरे का प्रतीक था लेकिन मज़दूरों के दिल में वह शोषण और अन्याय विहीन दुनिया की उम्मीद जगाता था। विद्रोही पेरिस ने मज़दूर आंदोलन की किलेबंदी कर दी, अधिक क्रांतिकारी रुख अपनाने और जुझारूपन को तेज करने के लिए प्रेरित किया। अनुभव ने सिद्ध कर दिया कि क्रांति संभव है, कि लक्ष्य हो सकता है और होना चाहिए ऐसे समाज का निर्माण जो पूंजीवादी व्यवस्था से पूरी तरह भिन्न हो, लेकिन यह भी कि इसे हासिल करने के लिए मज़दूरों को राजनीतिक जुड़ाव के टिकाऊ और सुसंगठित रूपों को तैयार करना होगा।

यह अपार ओजस्विता हर कहीं दीख रही थी। जनरल कौंसिल की मीटिंगों में उपस्थिति दोगुनी हो गई और इंटरनेशनल से जुड़े हुए अखबारों की तादाद और कुल बिक्री भी बढ़े। समाजवादी सिद्धांतों के प्रसार में जिनका गंभीर योगदान रहा वे थे : जेनेवा में ल'इगालिते जो पहले बाकुनिनपंथी अखबार था और फिर 1870 में संपादक बदलने के बाद स्विट्ज़रलैंड में इंटरनेशनल का प्रधान पत्र बन गया; लाइपत्सिग में सोशल डेमोक्रेटिक वर्कर्स पार्टी का पत्र डेर फ़ोक्सस्टाट; मैड्रिड में स्पैनिश फ़ेडरेशन का आधिकारिक अखबार ला इमान्सिपाशियों; मिलान में ई गाज़ेतिनो रोजा जो पेरिस की घटनाओं के बाद इंटरनेशनल की ओर चला आया; डेनिश मज़दूरों का पहला खबरची जोसियालित्सेन; और शायद इन सबमें सर्वोत्तम रूएं में ला सोसिएल।

आखिरी और सबसे महत्वपूर्ण बात कि इंटरनेशनल का विस्तार बेल्जियम और स्पेन में जारी रहा जहां मज़दूरों की सक्रियता का स्तर पेरिस कम्यून से पहले ही बहुत अच्छा था तथा इटली में सचमुच एक गतिभंग दिखाई पड़ा। अनेक मैज़िनीपंथियों ने अपने भूतपूर्व प्रमुख की मान्यताओं से निराश होकर संगठन से जुड़ना शुरू किया तथा जल्दी ही इसके महत्वपूर्ण स्थानीय नेता बने। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण था जिसेप गैरीबाल्डी का समर्थन। हालांकि उनके दिमाग में

लंदन स्थित इंटरनेशनल के बारे में अमूर्त धारणा ही थी फिर भी इस 'दो दुनिया के नायक' ने इसका साथ पूरी तरह से देने का फैसला किया। सदस्यता के आवेदन पर उन्होंने मशहूर वाक्य लिखा : 'इंटरनेशनल भविष्य का सूर्य है'। इसे मज़दूरों के दर्जनों अखबारों और पत्रिकाओं में छापा गया। संगठन में शामिल होने में जो लोग हिचक रहे थे ऐसे अनेक लोगों को इस पत्र ने इंटरनेशनल से जोड़ने में भूमिका निभाई।

पुर्तगाल में भी इंटरनेशनल ने नए प्रभाग खोले। वहां इसकी स्थापना अक्टूबर 1871 में हुई थी। इसी माह डेनमार्क में भी कोपेनहागन और जुटलैंड में नवजात अधिकांश यूनियनों को इसने जोड़ना शुरू किया। ब्रिटेन में आयरलैंड के मज़दूरों के प्रभागों की स्थापना एक और महत्वपूर्ण विकास था तथा मज़दूरों के नेता जान मैकडोनेल को आयरलैंड के लिए जनरल कौंसिल का संचार सचिव नियुक्त किया गया। दुनिया के विभिन्न हिस्सों से संबद्धता के लिए अप्रत्याशित अनुरोध मिले : कलकत्ता के कुछ अंग्रेज मज़दूरों, विक्टोरिया, आस्ट्रेलिया और क्राइस्टचर्च, न्यूज़ीलैंड के मज़दूर समूहों तथा ब्यूनस आयर्स के ढेर सारे कारीगरों ने जुड़ने की इच्छा जाहिर की।

9. 1871 का लंदन सम्मेलन

इंटरनेशनल की पिछली कांग्रेस को संपन्न हुए दो साल बीत चुके थे लेकिन तत्कालीन परिस्थितियों में नई कांग्रेस आयोजित नहीं हो पा रही थी। इसलिए जनरल कौंसिल ने लंदन में सम्मेलन आयोजित करने का फैसला किया; 17 से 23 सितंबर के बीच 22 प्रतिनिधियों की भागीदारी के साथ सम्मेलन संपन्न हुआ। ये ब्रिटेन (आयरलैंड को भी पहली बार प्रतिनिधित्व मिला), बेल्जियम, स्विट्ज़रलैंड और स्पेन से तथा निर्वासित फ़्रांसिसी थे।

मार्क्स ने पहले ही घोषित कर रखा था कि सम्मेलन 'सिर्फ़ संगठन और नीति के सवालों पर' होगा, सैद्धांतिक सवालों पर बाद में कभी विचार होगा। इसके पहले ही अधिवेशन में उन्होंने इसे दोहराया :

> "जनरल कौंसिल ने यह सम्मेलन विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों के साथ उन उपायों के बारे में सहमति बनाने के के लिए आयोजित किया है जिन्हें ढेर सारे देशों में इंटरनेशनल के समक्ष खतरों के मद्देनजर करना तथा परिस्थिति की

जरूरत के अनुरूप नए संगठन की दिशा में आगे बढ़ना जरूरी हो गया है। दूसरा मुद्दा यह है कि जो सरकारें उपलब्ध प्रत्येक साधन से इंटरनेशनल को खत्म करने के लिए लगातार सक्रिय हैं उनका जवाब कैसे दिया जाए। आखिरी बात स्विस विवाद को हमेशा के लिए हल करना है।"

इन प्राथमिक कामों को पूरा करने के लिए मार्क्स ने पूरा जोर लगा दिया : इंटरनेशनल को पुनर्गठित करना, दुश्मन ताकतों के हमलों से इसकी रक्षा करना और बाकुनिन के बढ़ते प्रभाव को रोकना। सम्मेलन के सबसे सक्रिय प्रतिनिधि के बतौर मार्क्स 102 बार बोलने खड़े हुए, जो प्रस्ताव उनकी योजना से मेल नहीं खाते थे उन्हें रोका और असहमत लोगों को भी अपने पक्ष में कर लिया। लंदन के इस सम्मेलन ने संगठन में उनके कद की पुष्टि की जो न केवल उसकी राजनीतिक दिशा को आकार देने वाला दिमाग था बल्कि उसका सबसे अधिक लड़ाकू और सक्षम योद्धा भी था।

इस सम्मेलन को जिस महत्वपूर्ण निर्णय के लिए बाद में भी याद रखा जाएगा वह था वाइलैन्त के नवें प्रस्ताव का अनुमोदन। ब्लांकीपंथियों की बची खुची ताकतों ने पेरिस कम्यून के अंत के बाद इंटरनेशनल से अपने को जोड़ लिया था। उनके इस नेता ने प्रस्तावित किया कि संगठन को जनरल कौंसिल के नेतृत्व में केंद्रीकृत, अनुशासित पार्टी में बदल दिया जाना चाहिए। ब्लांकीपंथियों का मानना था कि क्रांति के लिए लड़ाकुओं का सुगठित केंद्रक पर्याप्त है। इसी तरह की बातों पर कुछेक मतभेदों के बावजूद मार्क्स ने वाइलैन्त के गुट के साथ मोर्चा बनाने में कोई हिचक नहीं दिखाई। ऐसा न केवल इंटरनेशनल के भीतर बाकुनिनपंथी अराजकतावाद का विपक्ष मजबूत करने के लिए जरूरी लगा बल्कि वर्ग संघर्ष के नए दौर में आवश्यक बदलावों के बारे में व्यापक सहमति बनाने के लिए भी किया गया। इसलिए लंदन में पारित प्रस्ताव में कहा गया :

"कि संपत्तिशाली वर्गों की सामूहिक शक्ति के विरुद्ध मज़दूर वर्ग राजनीतिक पार्टी के रूप में अपने आपको संगठित किए बिना वर्ग के रूप में कुछ नहीं कर सकता। यह पार्टी संपत्तिशाली वर्गों द्वारा बनाई गई सभी पुरानी पार्टियों के विरुद्ध और उनसे अलग होगी। कि राजनीतिक पार्टी के रूप में मज़दूर वर्ग का यह संगठन सामाजिक क्रांति की विजय और उसके अंतिम लक्ष्य, वर्गों के उन्मूलन की गारंटी के लिए अपरिहार्य है। और कि मज़दूर वर्ग के आर्थिक संघर्षों से हासिल शक्ति संयोजन को जमींदारों तथा पूंजीपतियों की राजनीतिक

सत्ता के विरुद्ध इसके संघर्षों के लिए उत्तोलक (लीवर) के बतौर काम करना चाहिए।"

निष्कर्ष स्पष्ट था : 'आर्थिक आंदोलन (मज़दूर वर्ग का) तथा उसकी राजनीतिक कार्यवाहियां अविभाज्य रूप से आपस में जुड़ी हुई हैं।'

1866 की जेनेवा कांग्रेस ने अगर ट्रेड यूनियनों का महत्व स्थापित किया था तो 1871 के लंदन सम्मेलन के साथ केंद्र में बदलाव आया और वह अब आधुनिक मज़दूर आंदोलन का एक और महत्वपूर्ण हथियार यानी राजनीतिक पार्टी बन गया। बहरहाल इस बात पर भी बल देना होगा कि बीसवीं सदी में इसकी जो धारणा विकसित हुई उसके मुकाबले उस समय की धारणा काफी व्यापक थी। इसलिए मार्क्स की धारणा को ब्लांकीपंथियों की धारणा से, बाद में दोनों का टकराव खुलेआम हुआ, और अक्टूबर क्रांति के बाद कम्युनिस्ट संगठनों द्वारा अपनाई गई धारणा से भी अलगाना चाहिए।

मार्क्स के तईं मज़दूर वर्ग की खुद की मुक्ति के लिए दीर्घकालीन और कष्टसाध्य प्रक्रिया की जरूरत थी। यह प्रक्रिया सेर्गेई नेचायेव (1847-82) की क्रांतिकारी की प्रश्नावली में बताए गए सिद्धांत और व्यवहार के पूरी तरह विपरीत थी। इस प्रश्नावली में गुप्त सोसाइटियों की वकालत की गई थी जिसकी आलोचना लंदन के प्रतिनिधियों ने की लेकिन बाकुनिन ने उत्साह के साथ उसका समर्थन किया था।

लंदन सम्मेलन में केवल चार प्रतिनिधियों ने नवें प्रस्ताव का विरोध किया। उनका तर्क था कि राजनीति में संलग्न न होने के 'अनुपस्थितिवादी' रुख की जरूरत है। लेकिन मार्क्स की जीत जल्दी ही भंगुर सिद्ध हुई। जिन्हें राजनीतिक पार्टी कहा जाए उनकी प्रत्येक देश में स्थापना के आवाहन और जनरल कौंसिल को व्यापक शक्ति प्रदान करने का इंटरनेशनल के आंतरिक जीवन के लिए गंभीर नतीजा निकला। वह अभी संगठन के लचीले रूप के मुकाबले इतनी तेजी से राजनीतिक तौर पर समरूप ढांचे में ढलने के लिए तैयार नहीं था।

लंदन में आखिरी फैसला ब्रिटिश फ़ेडरल कौंसिल की स्थापना का लिया गया। चूँकि मार्क्स की नजर में पेरिस कम्यून की पराजय के साथ महाद्वीप में क्रांति की स्थिति क्षीण हो चली थी इसलिए ब्रिटिश पहलकदमियों की नजदीकी निगरानी की कोई जरूरत नहीं रह गई थी।

मार्क्स को यकीन था कि सम्मेलन के प्रस्तावों का समर्थन लगभग सभी प्रमुख फ़ेडरेशन और स्थानीय प्रभाग कर देंगे लेकिन जल्दी ही उन्हें फिर से सोचना पड़ा। 12 नवंबर को जूरा फ़ेडरेशन ने सोनविलिएर के छोटे से कम्यून में अपनी अलग कांग्रेस आहूत की और हालांकि बाकुनिन तो इसमें भाग नहीं ले सके लेकिन इसके जरिए इंटरनेशनल के भीतर आधिकारिक विपक्ष की आमद हो गई। कार्यवाही के अंत में जारी इंटरनेशनल के सभी फ़ेडरेशनों के लिए सर्कुलर में गिलौमे और अन्य भागीदारों ने जनरल कौंसिल पर आरोप लगाया कि वह इंटरनेशनल में 'प्राधिकार के सिद्धांत' का प्रवेश करा रहा है और इसकी मौलिक संरचना को बदलकर 'कमेटी द्वारा शासित और निर्देशित पदानुक्रमिक संगठन' बना रहा है। स्विस प्रभाग ने घोषित किया कि वे 'समस्त निर्देशक प्राधिकार' के विरुद्ध हैं 'भले ही वह प्राधिकार मज़दूरों द्वारा निर्वाचित और अनुमोदित हो' और जोर दिया कि 'प्रभागों की स्वायत्तता का सिद्धांत बरकरार रखा जाए' ताकि जनरल कौंसिल 'केवल संवाद और लेखा जोखा' का निकाय रहे। अंत में उन्होंने मांग की कि जितनी जल्दी हो सके कांग्रेस आयोजित की जाए।

हालांकि जूरा फ़ेडरेशन की प्रतिक्रिया अप्रत्याशित नहीं थी फिर भी शायद मार्क्स को अचंभा हुआ जब विक्षोभ के संकेत और जनरल कौंसिल की राजनीतिक दिशा से भी विद्रोह अन्य जगहों पर प्रकट हुए। अनेक देशों में लंदन में लिए गए फैसलों को स्थानीय राजनीतिक स्वायत्तता का अस्वीकार्य अतिक्रमण समझा गया। सम्मेलन में बेल्जियन फ़ेडरेशन ने विभिन्न पक्षों के बीच मध्यस्थता करना चाहा था लेकिन अब उसने लंदन के प्रति अधिक आलोचनात्मक रुख अपनाना शुरू किया। हालैंड ने भी बाद में दूरी बना ली। दक्षिणी यूरोप में प्रतिक्रिया और भी मजबूत थी इसलिए विपक्ष को जल्दी ही भरपूर समर्थन मिला। असल में तो आइबेरियाई इंटरनेशनल की भारी बहुसंख्या जनरल कौंसिल के विरोध में हो गई और बाकुनिन के विचारों का अनुमोदन किया। बेशक इसका आंशिक कारण यह था कि इस इलाके में औद्योगिक सर्वहारा की उपस्थिति केवल मुख्य शहरों में थी और यहां मज़दूर आंदोलन अब भी बहुत कमजोर था तथा प्रमुख रूप से आर्थिक मांगों तक सीमित था। इटली में भी लंदन सम्मेलन के नतीजों को नकारात्मक तरीके से ही देखा गया। मैज़िनी के अनुयायी 1 से 6 नवंबर 1871 तक रोम में एकत्र हुए और जनरल कांग्रेस आफ़ इटालियन वर्कर्स सोसाइटीज (कुछ अधिक नरमपंथी मज़दूर खेमा) संपन्न हुई, शेष अधिकांश लोग बाकुनिन के विचारों के पक्ष में थे। 4 से

6 अगस्त 1872 तक रिमिनी में इटालियन फ़ेडरेशन आफ़ द इंटरनेशनल की स्थापना कांग्रेस हुई और इसमें शामिल लोगों ने जनरल कौंसिल के विरुद्ध सर्वाधिक मूलगामी राय बनाई : वे इंटरनेशनल की आगामी कांग्रेस में भाग नहीं लेंगे, बल्कि उन्होंने न्यूचातेल, स्विट्ज़रलैंड में 'प्राधिकार विरोधी जनरल कांग्रेस' आयोजित करने का प्रस्ताव लिया। वस्तुतः आसन्न विभाजन की यह पहली कार्यवाही थी।

अटलांटिक के दूसरे तट पर भी संगठन में टकराव फूट पड़ा हालांकि मुद्दे अलग थे। 1871 के दौरान वहां के अनेक शहरों में इंटरनेशनल का विस्तार हुआ था और 50 प्रभागों की कुल सदस्यता 2700 तक पहुंच गई थी। अगले साल यह संख्या और भी बढ़ी (शायद लगभग 4000) लेकिन अब भी यह बीस लाख से ऊपर अमेरिकी कामगारों का बहुत ही छोटा हिस्सा था। संगठन अब भी प्रवासी समुदायों से बाहर निकलकर संयुक्त राज्य में जन्मे मज़दूरों को खींच पाने में असमर्थ ही रहा था। आंतरिक कलह का भी विनाशकारी असर पड़ा क्योंकि न्यूयार्क आधारित इंटरनेशनल के अमेरिकी सदस्य दिसंबर 1871 में दो धड़ों में बंट गए जिनमें से प्रत्येक धड़ा संयुक्त राज्य में इंटरनेशनल का वैध प्रतिनिधि होने का दावा करता था।

इनमें से स्प्रिंग स्ट्रीट कौंसिल नामक पहले और शुरू में बड़े धड़े ने अमेरिकी समाज के सबसे उदारपंथी समूहों के साथ संश्रय प्रस्तावित किया। इसे जनरल कौंसिल में अमेरिका के लिए संवाद सचिव के समर्थन का भरोसा था और इसकी सबसे सक्रिय शाखा 12वां प्रभाग थी। दूसरे धड़े का मुख्यालय टेन्थ वार्ड होटेल था। वह मज़दूर वर्गीय दिशा पर अडिग रहा और फ्रेडरिक एडोल्फ़ सोर्ज (1828-1906) इसमें सबसे प्रमुख व्यक्ति थे। मार्च 1872 में जनरल कौंसिल ने जुलाई में एकता कांग्रेस आयोजित करने की मांग की लेकिन इसका कोई नतीजा नहीं निकला और मई में आधिकारिक विभाजन हो गया। आपसी मतभेदों के चलते इंटरनेशनल के सदस्यों में कमी आने लगी। टेन्थ वार्ड होटेल धड़े ने 1872 में 6 से 8 जुलाई तक अपनी कांग्रेस की और नार्थ अमेरिकन कानफ़ेडरेशन की स्थापना की। इसके 950 सदस्य 22 प्रभागों में बिखरे हुए थे (केवल 3 अंग्रेजी भाषी, शेष 12 जर्मन, 4 फ़्रांसिसी, आयरलैंड, इटली और स्कैंनडेनेविया से एक एक)। इसी बीच मई में स्प्रिंग स्ट्रीट कौंसिल धड़े के कुछ सदस्यों ने इक्वल राइट्स पार्टी के एक सम्मेलन में भाग लिया। इस पार्टी की ओर से संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति पद के लिए

विक्टोरिया वुडहल चुनाव लड़ रही थीं। यह कोई वर्गीय मंच नहीं था बल्कि इसमें काम के हालात के नियमन और रोजगार सृजन के आम वादे किए गए थे। इसके कारण कुछ प्रभागों ने कौंसिल का साथ छोड़ दिया और इनकी सदस्य संख्या केवल 1500 रह गई। जुलाई में अमेरिकन कानफ़ेडरेशन के जन्म के बाद कौंसिल ने महज 13 प्रभाग बरकरार रखे जिनकी सदस्य संख्या 500 से कम ही थी (अधिकतर कारीगर और बुद्धिजीवी)। ये प्रभाग जनरल कौंसिल की दिशा को चुनौती देने वाले यूरोपीय फ़ेडरेशनों के साथ जुड़ गए।

अटलांटिक पार के इन झगड़ों के चलते लंदन के सदस्यों के आपसी रिश्ते भी खराब हुए। 1871-72 के दौरान जनरल कौंसिल के सचिव जान हेल्स (1839-अज्ञात) ने इकारियस की जगह अमेरिका के संवाद सचिव का कार्यभार संभाला लेकिन नीति उन्हीं की जारी रखे रहे। दोनों ही लोगों से मार्क्स के निजी रिश्ते खट्टे हो चले और ब्रिटेन में भी आंतरिक टकराव प्रकट होना शुरू हुआ। जनरल कौंसिल का समर्थन बहुसंख्यक स्विस, फ़्रांसिसी (अब ज्यादातर ब्लांकीपंथी), कमजोर जर्मन ताकतें, डेनमार्क, आयरलैंड और पुर्तगाल के नव गठित प्रभाग तथा हंगरी और बोहेमिया में पूर्वी यूरोपीय समूह करते थे। लेकिन उनकी कुल तादाद लंदन सम्मेलन के अंत में मार्क्स की उम्मीदों से काफी कम निकली।

जनरल कौंसिल का विरोधी पक्ष चरित्र के मामले में विविधतापूर्ण था और कभी कभी इसकी वजह निहायत निजी होती थी। ये सभी विचित्र किस्म के रसायन से एक साथ बंधे हुए थे और इसके चलते इंटरनेशनल का नेतृत्व करना और भी मुश्किल हो जाता था। कुछ देशों में बाकुनिन के सिद्धांतों के प्रति आकर्षण और विभिन्न तरह के विपक्षियों को एक जगह बांधे रखने की गिलौमे की क्षमता के भी परे 'मज़दूर वर्गीय राजनीतिक कार्यवाही' संबंधी प्रस्ताव के प्रति विरोध की मुख्य वजह वह माहौल था जो मार्क्स द्वारा प्रस्तावित गुणात्मक छलांग को स्वीकार नहीं करना चाहता था। व्यावहारिकता के तमाम दावों के बावजूद लंदन सम्मेलन में हुए बदलाव को अनेक लोगों ने बेवकूफाना हस्तक्षेप समझा। केवल बाकुनिन के साथ जुड़ा समूह ही नहीं, बल्कि अधिकांश फ़ेडरेशन और स्थानीय प्रभाग इंटरनेशनल के निर्माण के समय की स्वायत्तता तथा यथार्थ की विविधता के प्रति सम्मान को इंटरनेशनल का आधार स्तम्भ मानते थे। मार्क्स इसे भांपने में चूक गए और इसके कारण संगठन का संकट त्वरित हो गया।

10. इंटरनेशनल का संकट

1872 की गर्मियों के अंत में आखिरी लड़ाई हुई। पिछले तीन सालों में भयंकर घटनाएं घटित हुई थीं–फ़्रांको-प्रशियाई युद्ध, पेरिस कम्यून के बाद दमन की लहर और ढेर सारी आंतरिक कलहें। इन सबके बाद आखिरकार इंटरनेशनल की कांग्रेस हुई। जिन देशों में इसने हाल में जड़ पकड़ी थी वहां इसका विस्तार इंटरनेशनल के नारों से अचानक उत्साहित यूनियन नेताओं और मज़दूर कार्यकर्ताओं की जोरदार कोशिशों से हो रहा था। 1872 में संगठन की इटली, डेनमार्क, पुर्तगाल और नीदरलैंड में सर्वाधिक तीव्र वृद्धि हुई। ऐसा ठीक उसी समय हुआ जब फ़्रांस, जर्मनी और आस्ट्रो-हंगारी साम्राज्य में इस पर प्रतिबंध लगा हुआ था। फिर भी ज्यादातर सदस्यों को इसके नेतृत्वकारी समूह में चलने वाले टकरावों की गंभीरता की जानकारी नहीं थी।

इंटरनेशनल की पांचवीं कांग्रेस हेग में 2 से 7 सितंबर के बीच संपन्न हुई। इसमें कुल 14 देशों से 65 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इनमें 18 फ़्रांसिसी थे (जनरल कौंसिल में लिए गए 4 ब्लांकीपंथियों समेत), 15 जर्मन, 7 बेल्जियन, 5 ब्रिटिश, 5 स्पेनी, 4 स्विस, 4 डच, 2 आस्ट्रियाई और डेनमार्क, आयरलैंड, हंगरी, पोलैंड और आस्ट्रेलिया (विक्टोरिया प्रभाग से डब्ल्यू ई हरकोर्ट [अज्ञात]) से एक एक। फ़्रांसिसी पाल लफ़ार्ग को लिस्बन फ़ेडरेशन ने (और मैड्रिड फ़ेडरेशन ने भी) नामित किया था। इंटरनेशनल की इतालवी शाखा अपने सात प्रतिनिधियों को भेज नहीं सकी लेकिन इसके बावजूद यह इंटरनेशनल के इतिहास की सर्वाधिक प्रातिनिधिक जुटान थी।

कांग्रेस के महत्व के कारण मार्क्स को इसमें एंगेल्स के साथ भाग लेना पड़ा। असल में तो यह संगठन की एकमात्र कांग्रेस थी जिसमें मार्क्स ने भाग लिया। इसमें न तो डि पाएपे (शायद जानते थे कि साल भर पहले की लंदन जैसी मध्यस्थता वे नहीं निभा पाएंगे) आ सके और न ही बाकुनिन पहुंच सके। लेकिन जनरल कौंसिल के फैसलों का विरोधी 'स्वायत्ततावादी' समूह पूरी ताकत के साथ मौजूद था। इस समूह में बेल्जियम, स्पेन और नीदरलैंड के सारे प्रतिनिधि थे, स्विट्ज़रलैंड के आधे और ब्रिटेन, फ़्रांस और संयुक्त राज्य से कुछ कुछ। उनकी कुल संख्या 25 थी।

नियति की विंडबना कहिए कि कांग्रेस कनकोर्डिया हाल में शुरू हुई लेकिन

कांग्रेस में कनकोर्ड यानी सामंजस्य का लेशमात्र भी नहीं था। सभी सत्रों में दोनों खेमों के बीच शत्रुता चरम पर थी जिसके चलते बहसों का स्तर पिछली कांग्रेसों के मुकाबले बेहद घटिया था। यह शत्रुता क्रिडेन्शियल की पुष्टि के सवाल पर तीन दिनों की व्यर्थ तकरार से और कटु हो गई। प्रतिनिधियों का प्रतिनिधित्व सचमुच पूरी तरह से विषम था। उसमें संगठन के आंतरिक शक्ति संतुलन का सही प्रतिबिंबन नहीं हो रहा था। उदाहरण के लिए जर्मनी में इंटरनेशनल का उस तरह से कोई प्रभाग नहीं था जबकि फ़्रांस में उन्हें भूमिगत होना पड़ा था और उनका जनादेश काफी विवादास्पद था। अन्य प्रतिनिधियों को जनरल कौंसिल की सदस्यता के नाते प्रतिनिधित्व मिला था और वे किसी खास प्रभाग की इच्छा के प्रतिनिधि नहीं थे।

हेग कांग्रेस के प्रस्तावों का अनुमोदन इसीलिए हो सका क्योंकि कांग्रेस की संरचना में विकार था। वे अप्रामाणिक थे और उद्देश्य की उपयोगिता ही उन्हें एक साथ बांधे हुए थी फिर भी कांग्रेस में जो प्रतिनिधि अल्पसंख्यक थे असल में वे ही इंटरनेशनल की सबसे विशाल बहुसंख्या के प्रतिनिधि थे।

हेग कांग्रेस में सबसे महत्वपूर्ण फैसला यह हुआ कि 1871 के लंदन सम्मेलन के नवें प्रस्ताव को इंटरनेशनल की नियमावली की नई धारा 7 अ के रूप में शामिल कर लिया गया। 1864 की अस्थायी नियमावली में कहा गया था कि 'इसलिए मज़दूर वर्ग की आर्थिक मुक्ति ही वह महान लक्ष्य है जिसे हासिल करने के साधन के बतौर प्रत्येक राजनीतिक आंदोलन इसकी मातहती में चलेगा'। जो नई बात जोड़ी गई उसमें संगठन के भीतर का नया शक्ति संतुलन प्रतिबिम्बित हो रहा था। समाज के रूपांतरण के लिए अब राजनीतिक संघर्ष आवश्यक था क्योंकि 'जमीन के मालिक और पूंजी के मालिक अपनी आर्थिक इजारेदारी की रक्षा और उसकी निरंतरता के लिए और मज़दूरों को गुलाम बनाए रखने के लिए हमेशा अपने राजनीतिक विशेषाधिकारों का इस्तेमाल करेंगे इसलिए राजनीतिक सत्ता को जीतना मज़दूर वर्ग का महान कर्तव्य बन गया है'।

इस समय का इंटरनेशनल अपनी स्थापना के समय से पूरी तरह से भिन्न था। अधिकाधिक हाशिये पर जाने के बाद मूलगामी-लोकतांत्रिक घटक अब बाहर हो चुके थे, साझेदारीवादी पराजित किए जा चुके थे और उनमें से अनेक ने विचार बदल लिए थे, संगठन में सुधारवादियों की बहुतायत नहीं रह गई थी (ब्रिटेन को छोड़कर) और पूंजीवाद विरोध समूचे इंटरनेशनल की तथा अराजकतावादी-समूहवादी

जैसी हाल में निर्मित प्रवृत्तियों की राजनीतिक दिशा बन चुका था। इससे भी आगे की बात यह थी कि इंटरनेशनल की मौजूदगी के कुछेक सालों में थोड़ी बहुत आर्थिक समृद्धि नजर आई थी जिसके कारण हालात कुछ कम जोखिम भरे रहे लेकिन इसके बावजूद मज़दूरों ने समझ लिया कि ऐसे दर्द निवारकों के जरिए नहीं बल्कि असली बदलाव केवल मनुष्य के शोषण के अंत से आएगा। अब उनके संघर्ष अधिकाधिक उनकी भौतिक जरूरतों के आधार पर हो रहे थे, न कि जिनसे वे जुड़े थे उन खास समूहों की पहल के आधार पर।

बड़ी तस्वीर भी पूरी तरह से भिन्न हो गई थी। 1871 में जर्मनी के एकीकरण ने ऐसे युग के आगमन की पुष्टि कर दी जिसमें राजनीतिक, कानूनी और भूभागीय पहचान का केंद्रीय रूप राष्ट्र-राज्य बन गया। इसने ऐसे राष्ट्रोपरि निकाय पर सवाल खड़ा कर दिया जिसकी आमदनी अलग अलग देशों से एकत्र सदस्यता राशि थी तथा जो उन देशों के सदस्यों के नेताओं के बड़े हिस्से पर निर्भर था। इसके साथ ही राष्ट्रीय आंदोलनों और संगठनों के बीच बढ़ते अंतर्विरोधों ने जनरल कौंसिल के लिए सबकी मांगों को संतुष्ट करने लायक राजनीतिक संश्लेषण तैयार करना अत्यंत कठिन बना दिया। सही बात यह है कि शुरुआत से ही इंटरनेशनल ऐसे ट्रेड यूनियनों और राजनीतिक संगठनों का जमाजोड़ था जिनमें आपसी संगति आसान नहीं थी और इनके जरिए ठीक ठीक संगठनों के मुकाबले भावनाओं और राजनीतिक प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व होता था। बहरहाल 1872 के आते आते इंटरनेशनल के विभिन्न घटक और आम तौर पर मज़दूरों के संघर्ष स्पष्ट रूप से परिभाषित और सुगठित हो चले थे। ब्रिटिश ट्रेड यूनियनों के कानूनी हो जाने से वे आधिकारिक रूप से राष्ट्रीय राजनीतिक जीवन का अंग हो गईं। इंटरनेशनल का बेल्जियम फ़ेडरेशन बहुशाखाई संगठन था जिसमें केंद्रीय नेतृत्व सिद्धांत के क्षेत्र में स्वायत्त और महत्वपूर्ण योगदान करने में सक्षम था। जर्मनी में मज़दूरों की दो पार्टियां थीं, सोशल डेमोक्रेटिक वर्कर्स पार्टी आफ़ जर्मनी और जनरल एसोसिएशन आफ़ जर्मन वर्कर्स, और दोनों के ही संसद सदस्य थे। फ़्रांसिसी मज़दूर ल्यों से पेरिस तक 'स्वर्ग पर धावा' मारने की कोशिशें कर चुके थे। स्पेनी फ़ेडरेशन इतना विस्तार कर चुका था कि जन संगठन बन जाने की कगार पर था। अन्य देशों में भी ऐसे ही बदलाव हो रहे थे।

इस प्रकार इंटरनेशनल का शुरुआती ढांचा इसके मूल लक्ष्य के पूरा होने के साथ पुराना पड़ चुका था। अब हड़तालों के लिए यूरोप व्यापी समर्थन जुटाने की

तैयारी नहीं करनी थी। ट्रेड यूनियनों की या जमीन और उत्पादन के साधनों के समाजीकरण की उपयोगिता के बारे में कांग्रेस आयोजित करने की जरूरत नहीं रह गई थी। ये काम अब समूचे संगठन की सामूहिक धरोहर का अंग बन चुके थे। पेरिस कम्यून के बाद अब मज़दूर आंदोलन के सामने सचमुच क्रांतिकारी चुनौती दरपेश थी : पूंजीवादी उत्पादन पद्धति के खात्मे और पूंजीवादी दुनिया की संस्थाओं को उखाड़ फेंकने के लिए किस तरह का संगठन चाहिए? अब सवाल यह नहीं रह गया था कि वर्तमान समाज को कैसे सुधारा जाए बल्कि सवाल यह था कि नया समाज कैसे बनाया जाए। वर्ग संघर्ष की इस नई मंजिल में मार्क्स को प्रत्येक देश में मज़दूर वर्ग की राजनीतिक पार्टियों का निर्माण अपरिहार्य महसूस हुआ। इस मामले में फ़रवरी 1871 में एंगेल्स द्वारा लिखित दस्तावेज 'टु द फ़ेडरल कौंसिल आफ़ द स्पैनिश रीजन आफ़ द इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन' सर्वाधिक स्पष्ट कथन है :

> "अनुभव से सर्वत्र यह दिखाई पड़ा है कि पुरानी पार्टियों के इस प्रभुत्व से सर्वहारा को मुक्त करने का सर्वोत्तम तरीका प्रत्येक देश में ऐसी सर्वहारा पार्टी का निर्माण करना है जिसकी अपनी स्वतंत्र नीति हो, ऐसी नीति जो पुरानी पार्टियों से साफ तौर पर अलग हो क्योंकि इसमें मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए जरूरी शर्तों की अभिव्यक्ति होगी। इस नीति में प्रत्येक देश की विशेष परिस्थितियों के अनुरूप मुद्दों की भिन्नता हो सकती है लेकिन चूंकि पूंजी और श्रम के बीच बुनियादी रिश्ते सर्वत्र समान हैं और शोषित वर्गों के ऊपर संपत्तिशाली वर्गों का राजनीतिक प्रभुत्व सभी देशों का वर्तमान सच है इसलिए सर्वहारा नीति के सिद्धांत और लक्ष्य कम से कम सभी पश्चिमी देशों में समान होंगे।....राजनीतिक क्षेत्र में अपने दुश्मनों के साथ लड़ना छोड़ देने का मतलब होगा खासकर संगठन और प्रचार के मामले में सबसे ताकतवर हथियार से हाथ धो बैठना।"

इसलिए इसके बाद से सर्वहारा के संघर्ष के लिए पार्टी आवश्यक मानी जाने लगी। माना गया कि इसे सभी मौजूदा राजनीतिक ताकतों से स्वतंत्र होना होगा और इसके कार्यक्रम तथा संगठन का निर्माण राष्ट्रीय संदर्भ के अनुसार होगा। 23 जुलाई 1872 को संपन्न जनरल कौंसिल के अधिवेशन में मार्क्स ने न केवल अनुपस्थितिवादियों (जो लंदन सम्मेलन के नवें प्रस्ताव पर हमला करते थे) की आलोचना की, बल्कि 'इंगलैंड और अमेरिका के मज़दूर वर्ग' के उतने ही खतरनाक प्रस्ताव की आलोचना की 'जो पूंजीपतियों द्वारा राजनीतिक मकसद के लिए अपना इस्तेमाल होने देते' हैं। दूसरे सवाल पर उन्होंने लंदन सम्मेलन में ही

घोषित किया था कि 'राजनीति को सभी देशों की स्थितियों के अनुरूप समायोजित करना होगा'। अगले साल हेग कांग्रेस के तुरंत बाद एम्सटर्डम के एक भाषण में उन्होंने जोर दिया :

> "मज़दूर को किसी न किसी दिन राजनीतिक सत्ता हासिल करनी होगी ताकि ताकि वह श्रम को नए ढर्रे पर संगठित कर सके। यदि मज़दूर वर्ग राजनीति की उपेक्षा और उससे नफरत करने वाले पुराने इसाइयों की तरह पृथ्वी पर अपने राज से वंचित नहीं रहना चाहता तो उसे पुरानी संस्थाओं को टिकाए रखने वाली पुरानी राजनीति को उखाड़ फेंकना होगा। लेकिन हमने यह दावा नहीं किया कि इस लक्ष्य को हासिल करने का तरीका सर्वत्र एक समान होगा।...हम इस बात से इनकार नहीं करते कि ऐसे देश हैं....जहां मज़दूर अपना लक्ष्य शांतिपूर्ण साधनों से हासिल कर सकते हैं। यदि यह सच है तो हमें यह भी स्वीकार करना होगा कि महाद्वीप के अधिकांश देशों में बल ही हमारी क्रांति का उत्तोलक होगा। मज़दूर का राज स्थापित करने के लिए हमें किसी न किसी दिन बल का ही सहारा लेना पड़ेगा।"

"इस प्रकार हालांकि भिन्न भिन्न देशों में मज़दूरों की पार्टियां अलग अलग रूपों में सामने आईं फिर भी वे राष्ट्रीय हितों के अधीन नहीं थीं। समाजवाद के लिए संघर्ष को इस तरीके से सीमित नहीं होना चाहिए और खासकर नए संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीयता को सर्वहारा का निर्देशक सिद्धांत बने रहना होगा। इसे राज्य और पूंजीवादी व्यवस्था के जानलेवा संक्रमण के विरुद्ध निरोधक दवा का भी काम करना होगा।"

हेग कांग्रेस के दौरान तीखी बहसों के पहले कई बार वोट पड़े। धारा 7 अ के अंगीकरण के बाद नियमावली में राजनीतिक सत्ता पर कब्जा करने का लक्ष्य शामिल किया गया और इसके लिए आवश्यक उपकरण के बतौर मज़दूरों की पार्टी का संकेत भी दिया गया। इसके बाद जनरल कौंसिल को व्यापक अधिकार सौंपने का फैसला 32 वोटों के समर्थन, 6 के विरोध और 12 की अनुपस्थिति से हुआ। इसके कारण अल्पसंख्या की स्थिति और भी असहनीय हो गई क्योंकि अब जनरल कौंसिल का काम 'इंटरनेशनल के सिद्धांत, नियमावली और सामान्य नियमों का कड़ाई से पालन' की गारंटी करना था तथा उसे 'आगामी कांग्रेस तक के लिए इंटरनेशनल की शाखाओं, प्रभागों, कौंसिलों या फ़ेडरल कमेटियों और फ़ेडरेशनों को स्थगित रखने का अधिकार प्राप्त' था।

इंटरनेशनल के इतिहास में पहली बार इसकी सर्वोच्च कांग्रेस ने न्यूयार्क प्रभाग 12 नामक संगठन को निष्कासित करने के जनरल कौंसिल के फैसले को अनुमोदित किया (47 वोटों का समर्थन और 9 अनुपस्थित)। इसका कारण था 'इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन वर्ग उन्मूलन के सिद्धांत पर आधारित है और यह किसी पूंजीवादी तबके को शामिल नहीं कर सकती'। बाकुनिन (समर्थन 25, विरोध 6, अनुपस्थित 7) तथा गिलौमे (समर्थन 25, विरोध 9, अनुपस्थित 8) के निष्कासनों पर भी काफी हल्ला हुआ। इसकी अनुशंसा एक जांच आयोग ने की थी जिसने एलायंस फार सोशलिस्ट डेमोक्रेसी को 'इंटरनेशनल की नियमावली के पूरे विरोधी नियमों से संचालित गुप्त संगठन' बताया था। बहरहाल जूरा फ़ेडरेशन के संस्थापकों में से एक और उसके सबसे सक्रिय सदस्य अधेमार स्विट्ज़बुएबेल (1844-92) के निष्कासन का प्रस्ताव खारिज कर दिया गया (समर्थन 15, विरोध 17 और 7 अनुपस्थित)। अंत में कांग्रेस ने द एलायंस फार सोशलिस्ट डेमोक्रेसी ऐंड द इंटरनेशनल वर्किंग मेन'स एसोसिएशन नामक विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित करने के लिए अधिकृत किया जिसमें बाकुनिन के नेतृत्व वाले इस संगठन के इतिहास को खंगालते हुए एक एक देश में उसकी सार्वजनिक और गुप्त गतिविधियों का विश्लेषण किया गया था। एंगेल्स, लाफ़ार्ग और मार्क्स द्वारा लिखित इस दस्तावेज को जुलाई 1873 में फ़्रांसिसी भाषा में प्रकाशित किया गया।

कांग्रेस में इन हमलों का जवाब देने के मामले में विपक्ष एकताबद्ध नहीं था। कुछ विरोध में वोट दे रहे थे तो कुछ अनुपस्थित रह जा रहे थे। बहरहाल आखिरी दिन हेग प्रभाग की ओर से विक्टर डेव (1845-1922) ने संयुक्त घोषणा जारी की जिसमें कहा गया था :

1. हम स्वायत्तता और मज़दूर समूहों के फ़ेडरेशन के समर्थक जनरल कौंसिल के साथ अपना प्रशासनिक संबंध जारी रखेंगे।
2. जिन फ़ेडरेशनों का हम प्रतिनिधित्व करते हैं वे आपस में और इंटरनेशनल की सभी नियमित शाखाओं के साथ प्रत्यक्ष और स्थायी संबंध स्थापित करेंगे।
3. हम सभी फ़ेडरेशनों और प्रभागों का आवाहन करते हैं कि वे अबसे आगामी कांग्रेस तक इंटरनेशनल के भीतर श्रमिक संगठन के आधार के बतौर संघीय स्वायत्तता के सिद्धांतों के विजय की तैयारी करें।

यह वक्तव्य महज एक कार्यनीतिक चाल थी जिसका मकसद उस समय तक अनिवार्य हो चुके विभाजन की जिम्मेदारी से पीछा छुड़ाना था, न कि संगठन को फिर से शुरू करने के लिए गंभीर राजनीतिक पहल लेना। इस मामले में यह कोशिश 'केंद्रवादियों' द्वारा जनरल कौंसिल के अधिकार बढ़ाने के प्रस्तावों की तरह थी तब जबकि वे खुद वैकल्पिक मंच खड़ा करने की योजना बना चुके थे।

6 सितंबर के सुबह के सत्र में इस कांग्रेस की सबसे बड़ी नाटकीय घटना घटी। यह उस इंटरनेशनल का आखिरी काम था जिस रूप में इसे बरसों पहले सोचा और खड़ा किया गया था। एंगेल्स बोलने के लिए खड़े हुए और उपस्थित लोगों को आश्चर्य में डालते हुए उन्होंने प्रस्तावित किया कि 'जनरल कौंसिल का मुख्यालय 1872-73 के लिए न्यूयार्क स्थानांतरित कर दिया जाए और इसका निर्माण अमेरिकन फ़ेडरल कौंसिल के सदस्य करेंगे।' इस तरह मार्क्स और इंटरनेशनल के अन्य 'संस्थापक' अबसे इसके केंद्रीय निकाय के अंग नहीं रहेंगे जिसका निर्माण करने वालों के नाम तक ज्ञात नहीं थे (एंगेल्स ने 7 का प्रस्ताव किया और कहा कि इसे 15 तक विस्तारित किया जा सकता है)। मार्क्स के समर्थक जनरल कौंसिल के सदस्य प्रतिनिधि माल्टमैन बैरी (1842-1909) ने किसी और से बेहतर तरीके से सभाभवन की प्रतिक्रिया का वर्णन किया है :

> "विक्षुब्धों के चेहरे पर विस्मय और घबराहट फैल गई जब (एंगेल्स ने) अंतिम शब्द बोले।...कुछ देर बाद ही कोई बोलने के लिए खड़ा हो सका। यह तख्तापलट की कार्यवाही थी और प्रत्येक व्यक्ति बगल वाले का मुंह ताक रहा था।"

एंगेल्स ने तर्क दिया कि 'लंदन में आपसी टकराव इस हद तक पहुंच गए हैं कि (जनरल कौंसिल को) अन्यत्र स्थानांतरित करना होगा' और कि दमन की घड़ी में न्यूयार्क सबसे अच्छी जगह होगी। लेकिन ब्लांकीपंथी इस कदम का घोर विरोध कर रहे थे। उनका कहना था कि 'सबसे पहले इंटरनेशनल को सर्वहारा का स्थायी विद्रोही संगठन होना चाहिए' और कि 'जब कोई पार्टी संघर्ष के लिए एकताबद्ध होती है...इसकी कार्यवाही और जोरदार होती है, इसकी नेतृत्वकारी कमेटी और सक्रिय, हथियारबंद तथा मजबूत होती है।' हेग कांग्रेस में मौजूद वाइलैन्त और ब्लांकी के अन्य अनुयायियों ने अपने को ठगा महसूस किया जब उन्होंने देखा कि 'सिर' तो 'अटलांटिक के दूसरे तट की ओर ले जाया जा रहा है (जबकि) शरीर अब भी (यूरोप में) लड़ रहा है।' उनकी मान्यता थी कि 'इंटरनेशनल ने आर्थिक

संघर्षों में अग्रणी भूमिका निभाई थी' इसलिए उसे 'राजनीतिक संघर्ष में भी वही भूमिका निभानी चाहिए' और 'मज़दूरों की अंतर्राष्ट्रीय क्रांतिकारी पार्टी' में रूपांतरित हो जाना चाहिए। जनरल कौंसिल पर नियंत्रण करना असंभव समझकर वे कांग्रेस से और कुछ दिनों बाद इंटरनेशनल से बाहर चले गए।

बहुसंख्यक कतारों में से भी अनेक ने यह मानकर इसके विरोध में वोट दिया कि न्यूयार्क के लिए स्थानांतरण, कारगर संगठन के बतौर इंटरनेशनल का अंत है। इस फैसले का अनुमोदन सिर्फ़ तीन वोट से हुआ (समर्थन 26, विरोध 23)। ऐसा तभी हो सका जब 9 लोगों ने किसी पक्ष में वोट नहीं दिया और अल्पसंख्या के कुछ सदस्य खुश थे कि जनरल कौंसिल उनकी गतिविधि के केंद्र से दूर जा रही है।

इस कदम के पीछे निश्चय ही मार्क्स का यह मत था कि विरोधियों के हाथों में संकीर्णतावादी संगठन के रूप में इसके इस्तेमाल होने से बेहतर है कि इसे दूर छोड़ आया जाय। न्यूयार्क भेजने से इंटरनेशनल का अंत निश्चित था और लंबे समय तक चलने वाले व्यर्थ के कलहपूर्ण संघर्षों से यह कहीं बेहतर था।

फिर भी जैसा बहुत लोगों ने कहा है उस तरह यह कहना सही नहीं लगता कि इंटरनेशनल के पतन का मुख्य कारण इसकी दो धाराओं के बीच का, या फिर दो व्यक्तियों—मार्क्स और बाकुनिन के बीच का टकराव था भले ही उनका कद कितना भी बड़ा क्यों न रहा हो। इसकी जगह यह अधिक सही लगता है कि इंटरनेशनल के आसपास की दुनिया में हो रहे बदलावों ने उसे पुराना बना दिया। मज़दूर आंदोलन के संगठनों की वृद्धि और उनका रूपांतरण, इटली और जर्मनी के एकीकरण के फलस्वरूप राष्ट्र-राज्य की मजबूती, इटली और स्पेन जैसे देशों में (जहां के समाजार्थिक हालात ब्रिटेन या फ़्रांस से बहुत अलग थे) इंटरनेशनल का विस्तार, ब्रिटिश ट्रेड यूनियन आंदोलन में और भी नरमपंथ की ओर झुकाव, पेरिस कम्यून के बाद दमन—इन सब कारकों ने मिलकर इंटरनेशनल की मूल संरचना को नए समय के लिए अनुपयोगी बना दिया।

इस पृष्ठभूमि में इंटरनेशनल के भीतर की केंद्रापसारी प्रवृत्तियों, उसके और उसके प्रमुख नेताओं के जीवन में आए बदलावों ने भी स्वाभाविक तौर पर एक भूमिका निभाई। उदाहरण के लिए मार्क्स ने लंदन सम्मेलन को इंटरनेशनल को बचाने वाली घटना समझा लेकिन वह ऐसी साबित नहीं हुई। बल्कि इसके कठोर

रुख ने आंतरिक संकट को बहुत बढ़ा दिया क्योंकि यह मौजूदा मानसिकता को नही समझ सकी या बाकुनिन और उसके समूह के सुदृढ़ीकरण से बचने के लिए आवश्यक पूर्वानुमान लगाने में नाकामयाब रही। उसमें मार्क्स की विजय नाशकारी सिद्ध हुई। इसके जरिए आंतरिक टकरावों को सुलझना था लेकिन वे और भी उलझ गए। बहरहाल मामला तो यह है कि लंदन में लिए गए फैसलों ने उस प्रक्रिया को गति दे दी जो पहले ही शुरू हो चुकी थी और जिसकी वापसी असंभव थी।

इस प्रमुख नायक के बारे में इन तमाम ऐतिहासिक और सांगठनिक बातों के अतिरिक्त और भी बातें हैं जो कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। मार्क्स ने 1871 के लंदन सम्मेलन के एक सत्र में प्रतिनिधियों को चेताया था 'कौंसिल का काम बहुत बढ़ गया है क्योंकि उसे आम सवालों के साथ राष्ट्रीय सवालों से भी निबटना पड़ता है।' अब यह 1864 का इंगलैंड और फ्रांस के सहारे चलने वाला छोटा संगठन नहीं रह गया था। अब इसकी मौजूदगी यूरोप के सभी देशों में थी जिन सबकी खास समस्याएं और विशेषताएं थीं। न केवल सब जगह संगठन आंतरिक टकरावों से अस्त व्यस्त था बल्कि लंदन में नई नई चिंताओं और रंग बिरंगे विचारों का बोझ लेकर आने वाले प्रवासी कम्युनार्डों के आगमन ने जनरल कौंसिल के लिए राजनीतिक संश्लेषण का अपना काम पूरा करना और भी मुश्किल कर दिया था।

इंटरनेशनल के लिए 8 साल तक दिन रात काम करने के चलते मार्क्स बुरी तरह से थक गए थे। वे जानते थे कि पेरिस कम्यून की हार के बाद मज़दूरों की ताकत टूट चली है। इस समय यह तथ्य उनके लिए सबसे महत्व का था। इसलिए उन्होंने तय किया कि बाकी बचे हुए साल वे कैपिटल को पूरा करने में लगाएंगे। जब उन्होंने नीदरलैंड जाने के लिए उत्तरी समुद्र को पार किया होगा तो उन्हें लगा होगा कि प्रत्यक्ष नायक के तौर पर आगामी युद्ध उनकी आखिरी बड़ी लड़ाई होना चाहिए।

1864 की सेंट मार्टिन'स हाल की पहली बैठक में वे खामोश प्रेक्षक रहे थे। वहां से लेकर अब यह आलम था कि इंटरनेशनल के नेता के बतौर उनकी मान्यता न केवल कांग्रेस के प्रतिनिधियों और जनरल कौंसिल में थी बल्कि व्यापक जनता भी उन्हें इंटरनेशनल का नेता मानती थी। इस तरह हालांकि मार्क्स ने इंटरनेशनल के लिए बहुत कुछ किया लेकिन उसने भी मार्क्स की जिंदगी को बदल दिया। इसकी स्थापना से पहले वे राजनीतिक कार्यकर्ताओं के छोटे समूहों में ही जाने

जाते थे। इसके बाद और सबसे अधिक पेरिस कम्यून के बाद और साथ ही 1867 में अपने महाग्रंथ के प्रकाशन के बाद उनकी प्रसिद्धि अनेक यूरोपीय देशों के क्रांतिकारियों में फैल गई–इस हद तक कि अखबार उन्हें 'लाल आतंक का डाक्टर' कहने लगे। इंटरनेशनल में उनकी भूमिका के चलते आयद जिम्मेदारी ने उन्हें अनेकानेक आर्थिक और राजनीतिक संघर्षों को नजदीक से अनुभव करने का मौका दिया। इससे उन्हें कम्युनिज्म के बारे में और भी सोचने की प्रेरणा मिली तथा उन्होंने पूंजीवाद विरोधी अपने समग्र सिद्धांत को इस अनुभव से गहराई के साथ समृद्ध किया।

11. मार्क्स बनाम बाकुनिन

हेग कांग्रेस के बाद भी कुछ महीनों तक दोनों खेमों के बीच लड़ाई चलती रही लेकिन शायद ही किसी मामले में दोनों के मौजूदा सैद्धांतिक और वैचारिक अंतर इसके केंद्र में रहे हों। मार्क्स अक्सर बाकुनिन के विचारों का मजाक उड़ाते थे, उन्हें 'वर्ग समानता' (एलायंस फार सोशलिस्ट डेमोक्रेसी के 1869 कार्यक्रम के सिद्धांतों के आधार पर) या राजनीतिक अनुपस्थितिवाद के वकील के रूप में पेश करते थे। अपनी ओर से यह रूसी अराजकतावादी, व्यक्तिगत आरोपों और प्रवादों के स्तर पर मुकाबला करना पसंद करता था क्योंकि प्रतिद्वंद्वी की सैद्धांतिक क्षमता का उसमें अभाव था। उसके सकारात्मक विचारों का एकमात्र सबूत ला लिबर्ते (ब्रसेल्स का अखबार) के लिए लिखा एक अधूरा खत है जिसे भेजा नहीं गया, विस्मृत रहा और लगातार चलने वाले झगड़ों में बाकुनिन के समर्थकों के किसी काम का नहीं निकला। इससे 'स्वायत्ततावादियों' के राजनीतिक विचारों का साफ खुलासा होता है :

> "इंटरनेशनल के फ़ेडरेशनों और प्रभागों–के सदस्यों को आपस में जोड़ने वाला नियम एक ही है।.....और वह है श्रम के शोषकों के विरुद्ध आर्थिक संघर्षों में सभी पेशों और सभी देशों के मज़दूरों की अंतर्राष्ट्रीय एकजुटता। मज़दूर वर्ग की स्वतःस्फूर्त कार्यवाही के जरिए उसी एकजुटता का संगठन और पूरी तरह से स्वतंत्र फ़ेडरेशन...ही इंटरनेशनल की वास्तविक और जीवंत एकता का प्राण है। कौन शक कर सकता है कि पूंजीवादी शोषण के विरुद्ध सर्वहारा की इसी जुझारू एकजुटता के अधिकाधिक व्यापक होते संगठन से ही पूंजीपतियों के विरुद्ध सर्वहारा का राजनीतिक संघर्ष पैदा होना चाहिए? इस सवाल पर

> मार्क्सवादी और हम एकमत हैं। लेकिन इसके बाद वह सवाल आता है जो हमें गहराई से मार्क्सवादियों से अलगा देता है। हमारा सोचना है कि सर्वहारा की नीति अनिवार्य तौर पर क्रांतिकारी होनी चाहिए जिसका एकमात्र और सीधा उद्देश्य राज्य का विनाश होगा। हम समझ नहीं पाते कि अंतर्राष्ट्रीय एकजुटता की बात करते हुए राज्य को संरक्षित रखना कैसे संभव है।....क्योंकि अपनी प्रकृति से ही राज्य उस एकजुटता के साथ घात है और इसीलिए स्थायी युद्ध का कारण है। हम यह भी नहीं समझ पाते कि राज्य के भीतर और उसके जरिए सर्वहारा की मुक्ति या जनसमुदाय की सच्ची आजादी की बात करना कैसे संभव है। राज्य का मतलब ही है अधिकारसंपन्न होना और समस्त अधिकारसंपन्नता के लिए जनसमुदाय की अधीनता और फलतः किसी न किसी शासक अल्पसंख्या के हित में उनका शोषण आवश्यक है। संक्रमण की प्रक्रिया में भी हम संविधान सभा, अस्थायी सरकार या तथाकथित क्रांतिकारी तानाशाही को स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि हमारा यकीन है कि जनगण के हाथों में ही क्रांति सच्ची, वास्तविक और ईमानदाराना हो सकती है तथा जब भी यह मुट्ठी भर शासक व्यक्तियों में केंद्रित होगी यह अनिवार्य रूप से और तत्काल प्रतिक्रिया हो जाती है।"

इस तरह साफ है कि किसी भी तरह के राजनीतिक प्राधिकार, खासकर उसके प्रत्यक्ष रूप राज्य, का कट्टर विरोध करने के मामले में बाकुनिन के विचार बहुत कुछ प्रूधों से मिलते जुलते हैं लेकिन उन्हें साझेदारीवादियों के साथ खड़ा कर देना गलत होगा। जहां साझेदारीवादी समस्त राजनीतिक गतिविधि से वस्तुतः अलग रहते थे और इंटरनेशनल के शुरुआती सालों में उनका भारी असर था वहीं स्वायत्ततावादी 'सामाजिक क्रांति की खास राजनीति के पक्ष में, पूंजीवादी राजनीति और राज्य के नाश के पक्ष में' लड़ते हैं—जैसा कि गिलौमे ने हेग कांग्रेस के अपने आखिरी हस्तक्षेप में कहा था। इसलिए माना जाना चाहिए कि वे इंटरनेशनल के क्रांतिकारी घटक थे और कि राजनीतिक सत्ता, राज्य और नौकरशाही के सवालों पर उनके विचार मजेदार आलोचनात्मक योगदान प्रतीत होते हैं।

फिर स्वायत्ततावादियों की 'नकारात्मक राजनीति' जिसे वे कार्यवाही का एकमात्र संभव रूप समझते थे वह कैसे केंद्रवादियों की 'सकारात्मक राजनीति' से अलग थी? इटालियन फ़ेडरेशन के प्रस्ताव पर 15-16 सितंबर 1872 को संपन्न सेंट-इमिएर की इंटरनेशनल कांग्रेस, जिसमें हेग से लौटते हुए अन्य प्रतिनिधियों ने

भाग लिया था, के प्रस्तावों में कहा गया कि 'सभी राजनीतिक संगठन प्रभुत्व के संगठन ही हो सकते हैं। वे किसी एक वर्ग को लाभ पहुंचाते हैं और जनगण के लिए नुकसानदेह होते हैं। अगर सर्वहारा सारी राजनीतिक सत्ता पर कब्जा करना चाहता है तो वह खुद प्रभुत्वशाली और शोषक वर्ग हो जाएगा'। इसी कारण 'सर्वहारा का पहला काम समस्त सत्ता का नाश है' और 'इस नाश के लिए किसी भी तथाकथित अस्थायी और क्रांतिकारी राजनीतिक सत्ता का गठन केवल और बड़ा धोखा साबित होगा तथा सर्वहारा के लिए उतना ही खतरनाक होगा जितना मौजूदा कोई भी सरकार है'। बाकुनिन ने एक और अधूरे लेख 'द इंटरनेशनल ऐंड कार्ल मार्क्स' में जैसा जोर देकर कहा है कि इंटरनेशनल का कार्यभार 'राज्य और पूंजीवादी दुनिया से बाहर की राजनीति' में सर्वहारा का नेतृत्व करना था इसलिए उसके कार्यक्रम का सच्चा आधार 'सहज सरल-पूंजीवाद के विरुद्ध मज़दूर के आर्थिक संघर्ष में एकजुटता का निर्माण' होना चाहिए। असल में तो अगर तमाम बदलावों पर ध्यान दिया जाए तो सिद्धांतों की यह घोषणा इंटरनेशनल के मूल लक्ष्य के अधिक करीब थी और जिस दिशा का संकेत कर रही थी वह लंदन सम्मेलन के बाद मार्क्स और जनरल कौंसिल द्वारा अपनाई गई दिशा से बहुत अलग थी।

सिद्धांतों और लक्ष्यों के इस गंभीर विरोध ने हेग का माहौल तैयार किया था। जहां बहुसंख्या राजनीतिक सत्ता पर जीत को 'सकारात्मक' समझ रही थी वहीं स्वायत्ततावादी, राजनीतिक पार्टी को ऐसे उपकरण के बतौर पेश कर रहे थे जो अनिवार्य रूप से पूंजीवादी संस्थाओं के मातहत रहती है और कम्युनिज्म की मार्क्स की धारणा को भोंड़े तरीके से लासालीय फ़ोक्सस्टाट के समरूप बता रहे थे जबकि मार्क्स उसका अनथक विरोध करते थे। बहरहाल कुछ ही समय बाद जब शत्रुता के उपरांत विवेक पैदा हुआ तो बाकुनिन और गिलौमे ने माना कि दोनों पक्षों की चाहत एक ही है। मार्क्स ने एंगेल्स के साथ लिखी इंटरनेशनल में कल्पित फूटें में दर्ज किया कि समाजवादी समाज की एक पूर्वशर्त राजसत्ता का उन्मूलन है :

> "सारे समाजवादी अराजकतावाद को इस कार्यक्रम के रूप में देखते हैं—सर्वहारा आंदोलन का लक्ष्य यानी वर्ग उन्मूलन जब हासिल हो जाता है तो राजसत्ता लुप्त हो जाती है जो उत्पादकों की बहुसंख्या को मुट्ठी भर शोषक अल्पसंख्या के अधीन रखने का काम करती है और फिर सरकार के काम महज प्रशासनिक काम बनकर रह जाते हैं।"

दोनों के बीच अंतर असमाधेय इसलिए हो जा रहा था क्योंकि स्वायत्ततावादी जोर दे रहे थे कि इस लक्ष्य को तुरंत साकार किया जाए। मार्क्स की नजर में चूंकि स्वायत्ततावादी इंटरनेशनल को राजनीतिक संघर्ष का औजार मानने की जगह भविष्य के ऐसे आदर्श समाज का माडल मानते थे जहां किसी तरह का प्राधिकार नहीं होगा इसलिए बाकुनिन और उनके समर्थक

> "सर्वहारा की कतारों में अराजकता को ऐसा अमोघ अस्त्र समझते थे जो शोषकों के हाथों में सामाजिक और राजनीतिक सत्ता के केंद्रीकरण को खत्म करता है। इसी बहाने की आड़ में (वे) इंटरनेशनल से संगठन की जगह पर अराजकता को स्थापित करने के लिए कहते हैं जब पुरानी दुनिया उसे कुचल डालने का रास्ता खोज रही है।"

इस प्रकार हालांकि उनके बीच समाजवादी समाज में वर्गों और राज्य की राजनीतिक सत्ता को उखाड़ फेंकने की जरूरत के बारे में सहमति थी फिर भी दोनों पक्ष इस बदलाव को ले आने के लिए आवश्यक रास्ते और सामाजिक ताकतों के बुनियादी मुद्दों पर विपरीत बातें कह रहे थे। जहां मार्क्स के लिए सर्वोत्कृष्ट क्रांतिकारी कर्ता खास वर्ग, औद्योगिक सर्वहारा था वहीं बाकुनिन इसकी आशा 'जनता की विशाल भीड़', तथाकथित 'लंपट सर्वहारा' से करते थे जो 'पूंजीवादी सभ्यता से लगभग अदूषित होने के कारण अपने आंतरिक जीवन और अपनी आकांक्षाओं में, सामूहिक जीवन की तमाम आवश्यकताओं और तकलीफों में भविष्य के समाजवाद के सभी बीज लिए रहता है'। कम्युनिस्ट मार्क्स ने सीखा था कि सामाजिक रूपांतरण के लिए खास ऐतिहासिक परिस्थितियों, प्रभावशाली संगठन और जनता में वर्ग चेतना के निर्माण की दीर्घकालीन प्रक्रिया की जरूरत होती है वहीं अराजकतावादी बाकुनिन को यकीन था कि आम जन, तथाकथित 'भीड़' की अंतःचेतना 'अजेय और न्यायोचित' तो होती ही है, 'सामाजिक क्रांति के आरम्भ और उसकी विजय' के लिए भी अपने आपमें पर्याप्त होती है।

दूसरी असहमति का संबंध समाजवाद की प्राप्ति के उपकरणों से था। बाकुनिन की ज्यादातर लड़ाकू गतिविधियों में अधिकतर बुद्धिजीवियों की छोटी 'गुप्त सोसाइटियों' का निर्माण (या निर्माण की कल्पना) शामिल था जिन्हें वे 'समर्पित, ऊर्जावान, प्रतिभाशाली व्यक्तियों, सबसे आगे बढ़कर जनता के सच्चे दोस्तों को लेकर निर्मित क्रांतिकारी सेना' कहते थे जो आम विद्रोह की तैयारी करेंगे और क्रांति को सचालित करेंगे। इसके उलटा मार्क्स मज़दूर वर्ग द्वारा खुद

की मुक्ति में यकीन करते थे और मानते थे कि 'सर्वहारा आंदोलन के विकास से' गुप्त सोसाइटियों का टकराव होगा 'क्योंकि मज़दूरों को शिक्षित करने की बजाए ये सोसाइटियां उन्हें ऐसे मनमाने, रहस्यमय नियमों के अधीन ले आती हैं जो नियम उनकी स्वतंत्रता को नियंत्रित करते हैं और उनकी विवेक-शक्ति को विकृत करते हैं'। रूस से निर्वासित बाकुनिन मज़दूर वर्ग की सीधे क्रांति को प्रोत्साहित न करने वाली सभी राजनीतिक कार्यवाहियों का विरोध करता था जबकि लंदन में स्थायी आवास वाले राज्यविहीन मार्क्स सामाजिक सुधारों और आंशिक लक्ष्यों के लिए गोलबंदी से परहेज नहीं करते थे लेकिन इस बात को पूरी तरह मानते थे कि इनसे पूंजीवादी उत्पादन पद्धति को खत्म करने का मज़दूर वर्ग का संघर्ष मजबूत होना चाहिए न कि उसे व्यवस्था में समाहित हो जाना चाहिए।

इन अंतरों को क्रांति के बाद भी समाप्त नहीं होना था। बाकुनिन की नजर में 'राज्य का खात्मा सर्वहारा की आर्थिक मुक्ति की पूर्वशर्त या अनिवार्य सहचर' था। मार्क्स की नजर में राज्य न तो एक दिन में गायब हो सकता था न उसे गायब होना चाहिए। दिसंबर 1873 में अलमानाको रिपब्लिकानो में पहली बार प्रकाशित अपने लेख 'पोलिटिकल इनडिफ़रेंटिज्म' में उन्होंने इटली के मज़दूर आंदोलन में अराजकतावादियों के वर्चस्व को यह कहते हुए चुनौती दी कि

> "अगर मज़दूर वर्ग का राजनीतिक संघर्ष हिंसक रूप ग्रहण कर लेता है और अगर मज़दूर पूंजीपति वर्ग की तानाशाही की जगह पर अपनी क्रांतिकारी तानाशाही स्थापित करते हैं तो (बाकुनिन के मुताबिक) यह सिद्धांत से गद्दारी का भयंकर कृत्य होगा क्योंकि अपनी रोजमर्रा की कष्टकर सांसारिक जरूरतों को पूरा करने और पूंजीपति वर्ग के प्रतिरोध को कुचल देने के लिए उन्हें अपने हथियार रख देने और राज्य को उखाड़ फेंकने की बजाए राज्य को क्रांतिकारी और संक्रमणकालीन रूप प्रदान करना चाहिए।"

बहरहाल इस बात को मानना होगा कि हालांकि बाकुनिन कभी कभी पूंजीवादी और सर्वहारा सत्ता के बीच फ़र्क करने से उत्तेजक इनकार करते हैं लेकिन इसके बावजूद उन्होंने पूंजीवाद और समाजवाद के बीच के तथाकथित 'संक्रमण काल' के खतरों–खासकर क्रांति के बाद नौकरशाहाना पतन के खतरों को पहले ही देख लिया था। 1870 और 1871 में बाकुनिन ने 'क्नाउटो-जर्मेनिक एम्पायर ऐंड द सोशल रेवोल्यूशन' लिखा लेकिन वह अधूरी रही। उसमें लिखा :

"हमें बताया जाता है कि मार्क्स के जनता के राज्य में कोई विशेषाधिकार-संपन्न वर्ग नहीं होगा। सब समान होंगे, न केवल कानूनी और राजनीतिक दृष्टि से बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी।...इसलिए कोई विशेषाधिकार-संपन्न वर्ग नहीं होगा लेकिन सरकार होगी और ध्यान दीजिए कि यह अत्यंत जटिल सरकार होगी जो आजकल की सभी सरकारों के काम की तरह केवल जनता पर राजनीतिक शासन और प्रशासन से ही संतुष्ट नहीं होगी, बल्कि वह उनका आर्थिक शासन भी करेगी। इसके तहत वह उत्पादन और संपत्ति का न्यायपूर्ण वितरण, जमीन की खेती, कारखानों की स्थापना और उनका विकास, वाणिज्य का संगठन और दिशा निर्देश और आखिरकार राज्य नामक एकमात्र बैंक के जरिए उत्पादन के लिए पूंजी निवेश का काम अपने हाथों में केंद्रित कर लेगी।...यह वैज्ञानिक बौद्धिकता का सर्वाधिक कुलीन, तानाशाहीपूर्ण, उद्दंडता से भरा हुआ और सभी सत्ताओं के प्रति अवमानना से भरा हुआ शासन तंत्र होगा। उसमें एक नया वर्ग होगा, वास्तविक और नकलची वैज्ञानिकों और विद्वानों का एक नया पदानुक्रम होगा तथा दुनिया, ज्ञान के नाम पर शासन करने वाली अल्पसंख्या और विशाल अज्ञानी बहुसंख्या के बीच विभाजित होगी।...प्रत्येक राज्य चाहे वह सर्वाधिक गणतंत्रात्मक और सर्वाधिक लोकतांत्रिक राज्य ही क्यों न हो,...सारतः ऊपर से जनता को शासित करने वाली मशीनें ही होते हैं। यह शासन ऐसी प्रतिभाशाली और फलतः विशेषाधिकार संपन्न अल्पसंख्या के जरिए चलाया जाता है जो जनता के वास्तविक हितों को जनता से भी अधिक अच्छी तरह से जानने का दावा करते हैं।"

अंशतः अर्थशास्त्र के अपने अल्पज्ञान के कारण बाकुनिन द्वारा संकेतित संघीयतावादी रास्ता सचमुच का कोई उपयोगी निर्देश नहीं दे पाता कि भविष्य के समाजवादी समाज के सवाल को कैसे समझा जाए। लेकिन उसकी आलोचनात्मक अंतर्दृष्टि आगामी बीसवीं सदी के कुछ नाटकों के संकेत दे जाती है।

12. मार्क्स के बाद : 'केंद्रीयतावादी' और 'स्वायत्ततावादी' इंटरनेशनल

अब इंटरनेशनल को दुबारा कभी पहले की तरह का नहीं होना था। 1864 में पैदा हुए इस महान संगठन ने 8 सालों तक हड़तालों और संघर्षों का सफलतापूर्वक समर्थन किया, पूंजीवाद विरोधी कार्यक्रम अपनाया और सारे यूरोपीय देशों में अपनी मौजूदगी दर्ज कराई और वही हेग कांग्रेस में आखिरकार बिखर गया।

बहरहाल मार्क्स के कदम पीछे खींचने के बावजूद कहानी खत्म नहीं हुई। काफी सिकुड़े हुए आकार में और पुरानी राजनीतिक आकांक्षाओं तथा योजना बनाने और लागू करने की क्षमता से हीन दो समूहों का उदय हुआ। उनमें एक था पिछली कांग्रेस से उपजा 'केंद्रीयतावादी' बहुसंख्यक समूह जो जनरल कौंसिल के राजनीतिक नेतृत्व में संगठन का समर्थक था। दूसरा था 'स्वायत्ततावादी' या 'संघीयतावादी' अल्पसंख्यक समूह जो प्रभागों के लिए निर्णय लेने के मामले में पूर्ण स्वायत्तता का हामी था।

1872 में इंटरनेशनल की ताकत अभी क्षीण नहीं हुई थी। अतीतकाल से ही असमान विकास इसकी विशेषता रही थी। वही विशेषता फिर से दिखाई पड़ी जब कुछ देशों (मसलन ब्रिटेन) में इसकी गिरावट की भरपाई कुछ अन्य देशों (सबसे अधिक स्पेन और इटली) में इसके विस्तार ने कर दी। हेग के नाटकीय नतीजे ने संगठन को विभाजित कर दिया जिसके चलते खासकर 'केंद्रवादी' खेमे के अनेक कार्यकर्ताओं को महसूस हुआ कि मज़दूर आंदोलन का एक महत्वपूर्ण अध्याय बंद हो चला। नार्थ अमेरिकन फ़ेडरेशन के साथ यूरोप की बहुत कम ताकतों ने ही न्यूयार्क स्थित नई जनरल कौंसिल का साथ दिया। ये थे–स्विट्ज़रलैंड में रोमान्डे फ़ेडरेशन और कुछ जर्मन भाषी प्रभाग जो दोनों ही बेकर की अथक पहल पर आधारित थे, जर्मन सोशल डेमोक्रेटिक वर्कर्स पार्टी ने बेहिचक लेकिन मुश्किल से दृश्य समर्थन दिया, नए खुले आस्ट्रियाई प्रभाग जिन्होंने अदृश्य जर्मनों के विपरीत अपने सदस्यों के चंदे से कुछ धन एकत्र करके भेजा तथा डेनमार्क और पुर्तगाल के दूरस्थ प्रभाग। बहरहाल स्पेन, इटली और नीदरलैंड्स में बहुत कम ने नए निर्देशों का पालन किया। आयरलैंड में अभी संगठन जड़ नहीं पकड़ सका था। 1873 के आते आते फ़्रांस में इंटरनेशनल का कोई प्रभाग नहीं बचा। ब्रिटेन भी था लेकिन वहां हेग कांग्रेस के बहुत पहले से निजी झगड़े चल रहे थे और उनके कारण नवंबर 1872 में ब्रिटिश फ़ेडरल कौंसिल आपस में झगड़ने वाले दो समूहों में बंट गई जिनमें से प्रत्येक समूह देश में इंटरनेशनल का प्रतिनिधि होने का दावा करता था। 16 प्रभागों के नाम पर काम करने वाले हेल्स को हर्मान युंग (1830-1901) और थामस मोटरहेड (1825-84) जैसे इंटरनेशनल के नेताओं का समर्थन प्राप्त था, उन्होंने न्यूयार्क स्थित जनरल कौंसिल को अस्वीकार कर दिया और ब्रिटिश फ़ेडरेशन की ओर से जनवरी 1873 में नई कांग्रेस आयोजित किया। हेल्स और इकारियस दोनों ने कुछ अद्भुत कलाबाजियां दिखाईं। हालांकि उनकी निष्ठा सुधारवाद में थी और चुनाव लड़ने के पक्ष में वे बोलते थे तथा उनकी सोच

इंटरनेशनल को ट्रेड यूनियन समर्थन वाली ऐसी राजनीतिक पार्टी में बदलने की थी जो पूंजीपतियों के उदारवादी खेमे के साथ मोर्चा बनाए लेकिन वे आधिकारिक रूप से गिलौमे और बाकुनिन के अनुयायी अनुपस्थितिवादियों के साथ खड़ा हुए। इन घटनाओं के उत्तर में एंगेल्स ने दो सर्कुलर जारी किए जिनमें हेग में लिए गए फैसलों को मान्यता दी गई थी। इन पर मानचेस्टर तथा 'आधिकारिक' ब्रिटिश फ़ेडरल कौंसिल के महत्वपूर्ण नेताओं के और जनरल कौंसिल के मशहूर पूर्व सदस्य ह्यूपों तथा फ्रेडरिक लेसनर (1825-1910) के दस्तखत थे। कौंसिल की कांग्रेस जून में संपन्न हुई लेकिन उसमें भाग लेने वालों को इस कड़वी सच्चाई का सामना करना पड़ा कि जनरल कौंसिल के न्यूयार्क चले जाने के बाद (जिसे हर कोई संगठन के अंत के बतौर समझ रहा था) ब्रिटिश ट्रेड यूनियनों को अब कोई रुचि नहीं रह गई थी। इस तरह दोनों ही खेमों के साथ समान घटना हुई और वह यह कि उनका तेजी से पतन हुआ।

'केंद्रवादियों' की कांग्रेस उसी जेनेवा नगर में हुई जिसमें इंटरनेशनल की पहली कांग्रेस संपन्न हुई थी। बेकर की कोशिशों के चलते इसमें 30 प्रतिनिधियों ने भाग लिया जिनमें (पहली बार) दो महिलाएं भी शामिल हुईं। लेकिन इनमें से 15 तो जेनेवा से ही थे। अन्य देशों के प्रभागों के प्रतिनिधि जर्मनी, बेल्जियम और आस्ट्रिया-हंगरी से एक एक प्रतिनिधि ही थे। यूरोप में गोलबंदी में घटोत्तरी देखकर जनरल कौंसिल ने न्यूयार्क से प्रतिनिधि न भेजने का फैसला किया और ब्रिटिश फ़ेडरेशन द्वारा नियुक्त प्रतिनिधि सेराइलेर जेनेवा तक यात्रा न कर सके। असल में तो केंद्रवादी इंटरनेशनल का यही अंत था।

अटलांटिक के उस पार सोर्ज मशाल जलाए रखने के लिए कड़ी कोशिश कर रहे थे लेकिन वहां नार्थ अमेरिकन फ़ेडरेशन खत्म होने की कगार पर थी। सदस्यता के घटकर 1000 से कम रह जाने के चलते आर्थिक स्थिति खराब थी (उनमें से कुछ ही बकाया चुकाते थे)। इसके चलते चिट्ठियों के लिए टिकट खरीदना भी मुश्किल होता जा रहा था। अब यह केवल अमेरिका से जुड़े मसलों तक सीमित रह गई थी। अमेरिकी मज़दूर या तो इसके प्रति उदासीन रहते या शत्रुभाव रखते। नवंबर 1873 में इसने जो मेनिफ़ेस्टो टु द वर्किंग पीपुल आफ़ नार्थ अमेरिका जारी किया था उसके प्रति भी यही रुख रहा। सोर्ज ने महासचिव के पद से इस्तीफ़ा दे दिया और उसके बाद से ढाई सालों का इसका इतिहास एक तरह से पूर्वघोषित मृत्यु की ही दास्तान है। आखिरकार 15 जुलाई 1876 को अंत आ ही गया जब

365 सदस्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले दस प्रतिनिधियों की बैठक हुई और इसके तुरंत बाद वे सेंटेनियल एक्जिबिशन नामक पहले अमेरिकी वर्ल्ड फ़ेयर के साथ आयोजित वर्किंगमेन'स पार्टी आफ़ द यूनाइटेड स्टेट्स की स्थापना कांग्रेस में भाग लेने चल दिए।

हालांकि 'केंद्रीयतावादी' संगठन एकाध देशों में महज कुछ दिनों तक चला और सिद्धांत के क्षेत्र में वे आगे कोई योगदान न कर सके लेकिन दूसरी ओर स्वायत्ततावादी आगामी कुछ वर्षों तक वास्तविक और सक्रिय अस्तित्व बनाए रखने में कामयाब रहे। स्विस, इतालवी, स्पेनी और फ़्रांसिसी लोगों की भागीदारी वाली सेंट-आइमर कांग्रेस में यह माना गया कि 'किसी को यह अधिकार नहीं कि वह स्वायत्त फ़ेडरेशनों और प्रभागों को जिसे वे सर्वोत्तम समझें, उस राजनीतिक दिशा और आचरण को खुद के लिए निर्धारित करने और लागू करने के निर्विवाद अधिकार से उन्हें वंचित करे'। इंटरनेशनल के भीतर संघीय स्वायतता का यही विकल्प 'दोस्ती, एकजुटता और आपसी रक्षा का गठबंधन' मुहैया कराता है। ये विचार गिलौमे के थे। बाकुनिन ने इसे थोड़ा और सैद्धांतिक जामा पहनाया होता लेकिन उसके विपरीत इस युवा किंतु समझदार स्विस कार्यकर्ता की नजर जूरा, स्पेन और इटली के परे समर्थन बढ़ाने और लंदन की लाइन के विरोधी सभी फ़ेडरेशनों को अपने पक्ष में कर लेने पर टिकी थी। उसकी कार्यनीति काम आई। नए इंटरनेशनल के जन्म की तैयारी बड़ी बड़ी घोषणाओं के जरिए बात थोपे बिना सावधानी से करनी थी।

अगले कुछ महीनों में जुड़ने के प्रस्ताव आने शुरू हुए। स्वायत्ततावादियों का गढ़ स्पेन बना रहा जहां प्राक्सेडेस मातेओ सगास्ता (1825-1903) द्वारा संचालित दमन संगठन को फलने फूलने से नहीं रोक सका। दिसंबर 1872 और जनवरी 1873 के बीच संपन्न इसकी कोर्डोबा संघीय कांग्रेस तक इसमें 50 फ़ेडरेशन शामिल हो चुके थे जिनके 300 से अधिक प्रभाग और 25000 से अधिक कुल सदस्य थे (बार्सिलोना में 7500)। 1872 के उत्तरार्ध के बाद नए देशों में भी स्वायत्ततावादियों का समर्थन बढ़ा। दिसंबर में बेल्जियन फ़ेडरेशन की ब्रसेल्स कांग्रेस ने हेग कांग्रेस के प्रस्तावों को शून्य घोषित कर दिया, न्यूयार्क स्थित जनरल कौंसिल को मान्यता नहीं दी और सेंट-आइमर समझौते पर दस्तखत कर दिए। जनवरी 1873 में हेल्स और इकारियस के नेतृत्व में ब्रिटेन के विद्रोहियों ने भी यही राह पकड़ी और अगले महीने डच फ़ेडरेशन भी उनके साथ मिल गई।

स्वायत्ततावादियों के संपर्क फ़्रांस, आस्ट्रिया और संयुक्त राज्य में भी थे और वे नए इंटरनेशनल में बहुमत में आ गए फिर भी असलियत में यह मोर्चा नानाविध सिद्धांतों का जखीरा बना रहा। इसमें शामिल थे–गिलौमे और श्वाइट्ज़गेबेल (बाकुनिन सार्वजनिक जीवन से 1873 में अलग हो गए और 1876 में उनका देहांत हो गया) के नेतृत्व में स्विस अराजक-सामूहिकतावादी, डि पाएपे के नेतृत्व में बेल्जियन फ़ेडरेशन जिसके लिए जनता का राज्य (फ़ोक्सस्टाट) को सभी सार्वजनिक सेवाओं के प्रबंधन सहित अधिक शक्ति और क्षमता मुख्य बात थी, अतिक्रांतिकारी इतालवी जिन्होंने निश्चित असफलता वाली आम विद्रोह की दृष्टि अपनाई ('कर्म का प्रचार') और चुनावों में भागीदारी तथा प्रगतिशील पूंजीवादी ताकतों के साथ एकता के हामी ब्रिटिश यूनियन नेता। 1874 में जनरल एसोसिएशन आफ़ जर्मन वर्कर्स के लासालपंथियों से भी संपर्क स्थापित किया गया।

ऊपर वर्णित परिदृश्य बताता है कि हेग कांग्रेस में विभाजन के लिए जिम्मेदार प्रधान मतभेद न तो राज्य के साथ समझौता करने के लिए तैयार समूह और क्रांति के लिए अधिक इच्छुक सैद्धांतिक पक्ष के बीच था न ही राजनीतिक कार्यवाही के समर्थकों और इसके विरोधियों के बीच था। इसकी बजाए जनरल कौंसिल के प्रति मूलगामी और व्यापक विरोध का मुख्य कारण 1871 के लंदन सम्मेलन में हड़बड़ी में लिए गए फैसले थे। जूरा और स्पेनी फ़ेडरेशनों तथा नवगठित इतालवी फ़ेडरेशन ने मज़दूर वर्गीय राजनीतिक पार्टी बनाने के मार्क्स के आवाहन का कभी समर्थन नहीं किया होता। सबसे बड़ी बात कि उन देशों की समाजार्थिक स्थितियों में यह अकल्पनीय था। बहरहाल थोड़ा लचीला रुख अपनाने से बेल्जियन लोगों का समर्थन बरकरार रहता जो इंटरनेशनल और डच फ़ेडरेशन जैसे नवगठित फ़ेडरेशनों के बीच अनेक वर्षों तक संतुलन बनाए रखने में मुख्य भूमिका निभा रहे थे। आंतरिक टकराव थोड़ा कम तीखे होते तो ब्रिटेन में विभाजन को रोका जा सकता था जिसका संबंध नीतियों पर असहमति के मुकाबले व्यक्तित्वों की टकराहट से अधिक था। आखिरी बात : जैसा कुछ स्वायत्ततावादियों ने भांप लिया था कि जनरल कौंसिल को न्यूयार्क स्थानांतरित करने के फैसले ने 1872 के बाद उन्हें अधिक राजनीतिक अवसर दिया और उनकी दावेदारी बढ़ाने में मदद की। बहरहाल मार्क्स की नजर में 'प्रथम' इंटरनेशनल ने अपना ऐतिहासिक कार्यभार पूरा कर लिया था इसलिए उसके समाहार का समय आ गया था।

स्वायत्ततावादियों की 'पहली' या उनके कथनानुसार 'छठवीं' (इंटरनेशनल की

पांच की निरंतरता में) कांग्रेस जेनेवा में 1873 में 1 से 6 सितंबर तक हुई। इसमें बेल्जियम, स्पेन, फ़्रांस, इटली, ब्रिटेन, नीदरलैंड और स्विट्ज़रलैंड से 32 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। यह कांग्रेस केंद्रवादियों की कांग्रेस से एक सप्ताह पहले हुई और इसने घोषित किया कि 'इंटरनेशनल में एक नए युग की शुरुआत' हुई है। सर्वसम्मति से इसने जनरल कौंसिल को भंग करने का फैसला किया और इंटरनेशनल के इतिहास में पहली बार किसी कांग्रेस में अराजक समाज के सवाल पर बहस हुई। सामाजिक क्रांति की प्राप्ति के हथियार के बतौर आम हड़ताल के विचार को समाहित करके इंटरनेशनल के वैचारिक-राजनीतिक शस्त्रागार को समृद्ध किया गया। इस प्रकार अराजकतावादी संघाधिपत्यवाद के नाम से मशहूर होने वाली प्रवृत्ति की आधारशिला रख दी गई।

अगली कांग्रेस ब्रसेल्स में 1874 में 7 से 13 सितंबर तक हुई। इसमें सोलह प्रतिनिधि थे–ब्रिटेन से एक (इकारियस), स्पेन से एक और शेष सभी बेल्जियम से थे। इन चौदह में से दो को फ़्रांसिसी (पेरिस) या इतालवी (पालेर्मो) प्रभाग का जनादेश प्राप्त था तथा अन्य दो बेल्जियम में रह रहे लासालपंथी जर्मन प्रवासी थे। गिलौमे ने बताया कि इनमें से एक कार्ल फ़्राह्मे दरअसल जनरल एसोसिएशन आफ़ जर्मन वर्कर्स के प्रतिनिधि थे। समाजवाद के नक्शे पर अराजकतावादी और लासालपंथी विपरीत ध्रुव पर अवस्थित थे इस तथ्य के बावजूद गिलौमे ने उनकी उपस्थिति को प्रोत्साहित किया और इसके लिए 1873 की जेनेवा कांग्रेस द्वारा अनुमोदित नए नियमों का हवाला दिया जिनके तहत प्रत्येक देश के मज़दूरों को यह आजादी थी कि अपनी मुक्ति हासिल करने के सर्वोत्तम साधन का वे निर्णय करें। कुल मिलाकर यह इंटरनेशनल अधिकांशतः ऐसी जगह बन गई जहां अत्यंत कमतर (अल्पतम प्रतिनिधित्व वाले) नेता मिलते थे और मज़दूरों की भौतिक स्थितियों और उन्हें बदलने के लिए आवश्यक कार्यवाहियों के बारे में अमूर्त बहसें चलाते थे। 1874 में बहस अराजकतावाद और जनता का राज्य (फ़ोक्सस्टाट) के बीच थी और इंटरनेशनल की किसी कांग्रेस में 3 साल बाद भाग लेने वाला डि पाएपे इसमें प्रधान नेता था। अपने एक भाषण में उसने कहा कि 'स्पेन में, इटली के कुछ हिस्सों में और जूरा में हम अराजकता के समर्थन में हैं (लेकिन) जर्मनी में, नीदरलैंड्स में, ब्रिटेन में और अमेरिका में मज़दूर राज्य चाहते हैं (बेल्जियम में दोनों के बीच झूल रहे हैं)'। एक बार फिर कोई सामूहिक फैसला नहीं हो सका और कांग्रेस सर्वसम्मति से सहमत हुई कि 'प्रत्येक देश में किसी भी फ़ेडरेशन और

समाजवादी लोकतांत्रिक पार्टी को यह तय करना है कि कौन सी राजनीतिक दिशा का वह अनुसरण करना चाहती है'।

आठवीं कांग्रेस 1876 में 26 से 30 अक्टूबर के बीच बेर्नी में हुई और उसने भी इसी लाइन का अनुसरण किया। इसमें 28 प्रतिनिधि थे जिनमें 19 स्विस (जूरा फ़ेडरेशन से 17), 4 इतालवी, स्पेन और फ़्रांस से दो दो तथा बेल्जियम और नीदरलैंड्स से अकेले डि पाएपे। कार्यवाही से डि पाएपे और गिलौमे के रुख में आपसी विरोधिता का पता चलता है लेकिन अंत में बेल्जियन फ़ेडरेशन के एक प्रस्ताव पर उनमें सहमति बन गई। प्रस्ताव था कि अगले साल विश्व समाजवादी कांग्रेस आयोजित की जाए जिसका आमंत्रण 'यूरोप की समाजवादी पार्टियों के समस्त गुटों' को भेजा जाए।

बहरहाल इस आयोजन से पहले ही इंटरनेशनल की अंतिम कांग्रेस 1877 में 6 से 8 सितंबर के बीच वेरविएर्स में संपन्न हुई। इसमें 22 प्रतिनिधि जमा हुए–13 बेल्जियम से, स्पेन, इटली, फ़्रांस और जर्मनी से दो दो तथा जूरा फ़ेडरेशन के प्रतिनिधि गिलौमे। इनके अतिरिक्त समाजवादी समूहों से तीन पर्यवेक्षक भी थे जिनका काम केवल सलाह देना था। इन्हीं में से एक पीटर क्रोपाटकिन (1842-1921) भी थे जो बाद में अराजकतावादी कम्युनिज्म के संथापक बने। कांग्रेस में सक्रिय भागीदारी अराजकतावादियों की ही दिखाई पड़ी। इनमें अंद्रीया कोस्ता (1851-1910) जैसे भी कुछ लोग थे जो जल्दी ही समाजवाद की ओर आ गए। इस प्रकार स्वायत्ततावादी इंटरनेशनल ने भी अपना इतिहास खत्म किया। इसका जनाधार केवल स्पेन में था। उनके परिप्रेक्ष्य के मुकाबले समूचे यूरोप के मज़दूर आंदोलन की यह अनुभूति भारी पड़ी कि संगठित पार्टियों के जरिए राजनीतिक संघर्ष में भाग लेना अत्यंत महत्वपूर्ण है। स्वायत्ततावादी प्रयोग के खात्मे के बाद अराजकतावादियों और समाजवादियों में भी अलगाव निश्चित था।

13. नया इंटरनेशनल

1877 में घेन्ट नगर में यूनिवर्सल सोशलिस्ट कांग्रेस संपन्न हुई। इसमें पहले कभी के मुकाबले अधिक देशों का प्रतिनिधित्व हुआ। नौ देशों (फ़्रांस, जर्मनी, स्विट्ज़रलैंड, ब्रिटेन, स्पेन, इटली, हंगरी, रूस और बेल्जियम) के प्रतिनिधियों का लगभग 3000 मज़दूरों ने स्वागत किया। इनमें से कुछ प्रतिनिधियों को किसी अन्य देश के

संगठन का (डेनमार्क, संयुक्त राज्य और पहली बार ग्रीस तथा मिस्र के मज़दूर समूहों) भी अतिरिक्त जनादेश हासिल था। इंटरनेशनल के डि पाएपे, लीबक्नेख्त, फ़्रांकेल, गिलौमे, हेल्स और अन्य ऐतिहासिक नेता उपस्थित थे और यूरोपीय मज़दूर आंदोलन की एक समूची पीढ़ी के लिए संगठन के महत्व की गवाही दे रहे थे।

डि पाएपे और आगामी बेल्जियन समाजवादी नेता लुई बरट्रांड (1856-1943) द्वारा लिखित समापन वक्तव्य 'मेनिफ़ेस्टो टु वर्कर्स आर्गेनाइजेशंस ऐंड सोसाइटीज इन आल कंट्रीज' में कांग्रेस ने 'जनरल यूनियन आफ़ द सोशलिस्ट पार्टी' स्थापित करने का आवाहन किया। बहुसंख्यक प्रतिनिधियों ने एक सहमति पत्र पर भी दस्तखत किया :

> "चूंकि सामाजिक मुक्ति और राजनीतिक मुक्ति अविभाज्य हैं इसलिए सर्वहारा को संपत्तिशाली वर्गों की समस्त पार्टियों के विरोध में अलग पार्टी में संगठित होना चाहिए और उन सभी राजनीतिक साधनों से खुद को लैस करना चाहिए जो उसकी मुक्ति को प्रोत्साहित करने के लिए आवश्यक हों। चूंकि संपत्तिशाली वर्गों के प्रभुत्व के विरोध में चलने वाला संघर्ष का दायरा केवल स्थानीय या राष्ट्रीय होने की बजाए विश्वव्यापी होगा इसलिए इस संघर्ष में सफलता विभिन्न देशों के संगठनों की सामंजस्यपूर्ण और एकताबद्ध कार्यवाही पर निर्भर है। घेन्ट में यूनिवर्सल सोशलिस्ट कांग्रेस के निम्नहस्ताक्षरित प्रतिनिधि फैसला करते हैं कि जिन संगठनों का वे प्रतिनिधित्व कर रहे हैं वे संगठन आपसी औद्योगिक और राजनीतिक प्रयासों में एक दूसरे को भौतिक और नैतिक समर्थन देंगे।"

1871 के लंदन सम्मेलन के छह साल बाद घेन्ट की इस थीसिस ने सिद्ध किया कि मार्क्स महज समय से कुछ आगे रहे थे। क्योंकि उसी दस्तावेज में पुष्टि की गई :

> "हम आंदोलन, प्रचार, जन शिक्षा और एकजुटता के शक्तिशाली साधन के बतौर राजनीतिक कार्यवाही की जरूरत महसूस करते हैं। समाज के वर्तमान संगठन का मुकाबला चारों ओर से एकबारगी और उपलब्ध सभी साधनों से करना होगा।....समाजवाद को भविष्य के संभावित सामाजिक संगठन के बारे में महज सैद्धांतिक अटकलबाजी नहीं होना चाहिए। इसे वास्तविक और जीवंत, ठोस आकांक्षाओं, तात्कालिक जरूरतों तथा सामाजिक पूंजी और सामाजिक सत्ता को नियंत्रित करने वालों के विरुद्ध सर्वहारा वर्ग के दैनिक संघर्षों से जुड़ा हुआ होना चाहिए।"

"पूंजीपति वर्ग से राजनीतिक अधिकार छीन लेना, बिखरे हुए मज़दूरों को किसी एसोसिएशन में संगठित करना, प्रतिरोध सोसाइटियों या हड़ताल की कार्यवाही के जरिए काम के घंटों में कमी कराना–यह सब नए समाज के निर्माण में हाथ बंटाना तो है ही, भविष्य की सामाजिक व्यवस्था के सिलसिले में सच्ची खोज में संलग्न होना भी है।"

"अब तक असंगठित रहे मज़दूरों को एकताबद्ध होने दें और संगठन बनाने दें! जो लोग केवल आर्थिक धरातल पर संगठित हैं उन्हें राजनीतिक धरातल पर उतरने दें, वहां भी वही विरोधी और वही संघर्ष मिलेंगे तथा इनमें से एक धरातल पर हासिल जीत से दूसरे धरातल पर भी विजय की राह खुलेगी!"

"प्रत्येक देश में सभी पूंजीवादी पार्टियों से अलग विशाल पार्टी के रूप में वंचित वर्ग को संगठित होने दें और इस सामाजिक पार्टी को अन्य देशों की वैसी ही सामाजिक पार्टी के साथ कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ने दें!"

"अपने सभी अधिकारों पर दावा ठोंकने के लिए, समस्त विशेषाधिकारों के उन्मूलन के लिए दुनिया के मज़दूरों एक हो!"

बाद के दशकों में मज़दूर आंदोलन ने समाजवादी कार्यक्रम अपनाया, समूचे यूरोप में और उसके बाद सारे संसार में फैला और राष्ट्रोपरि समन्वय के लिए नए ढांचे बनाए। नामों की निरंतरता के अतिरिक्त (1889 से 1916 तक दूसरा इंटरनेशनल और 1919 से 1943 तक तीसरा इंटरनेशनल) भी इनमें से प्रत्येक ढांचे ने लगातार प्रथम इंटरनेशनल के मूल्यों और सिद्धांतों को याद रखा। इस तरह इसका क्रांतिकारी संदेश असाधारण रूप से उपजाऊ साबित हुआ और समय बीतने के साथ इसने अपने जीवनकाल से भी महत्तर परिणामों को जन्म दिया।

इंटरनेशनल ने मज़दूरों को समझने में मदद की कि श्रम को एक देश में मुक्ति नहीं मिल सकती बल्कि यह वैश्विक लड़ाई है। इसने उनको यह भी अनुभूत कराया कि श्रमिक मुक्ति का यह लक्ष्य उन्हें किसी अन्य ताकत के सहारे प्राप्त करने की जगह संगठन की अपनी क्षमता के बल पर खुद ही हासिल करना है। और कि उन्हें पूंजीवादी उत्पादन पद्धति तथा मजूरी की दासता पर विजय प्राप्त करनी है क्योंकि मौजूदा व्यवस्था के भीतर सुधार के लिए लड़ना जरूरी तो है लेकिन इससे मालिकों के अल्पतंत्र पर उनकी निर्भरता नहीं समाप्त होगी–इस मोर्चे पर मार्क्स का योगदान बुनियादी महत्व का था।

उस समय की उम्मीद और हमारे समय के अविश्वास के बीच अलंघ्य खाई है। इंटरनेशनल के युग की व्यवस्था विरोधी चेतना और एकजुटता तथा नवउदारवादी प्रतिद्वंद्विता और निजीकरण की बनाई हुई दुनिया के वैचारिक समर्पण और व्यक्तिवाद के बीच जमीन आसमान का अंतर आ गया है। 1864 में लंदन में एकत्र मज़दूरों में राजनीतिक भावावेग, आजकल व्याप्त उदासीनता और अर्पण के पूरी तरह विपरीत था।

इसके बावजूद चूंकि श्रम की दुनिया उन्नीसवीं सदी जैसी शोषक परिस्थितियों की ओर लौट रही है इसलिए एक बार फिर इंटरनेशनल का प्रोजेक्ट असाधारण तौर पर प्रासंगिक हो गया है। आज की 'विश्व व्यवस्था' की बर्बरता, वर्तमान उत्पादन पद्धति जनित पारिस्थितिकीय विनाशलीला, चंद शोषक संपत्तिशालियों और विशाल दरिद्र बहुसंख्या के बीच बढ़ती दूरी, महिला उत्पीड़न, युद्ध की प्रचंड आंधी, नस्लवाद और अंधराष्ट्रवाद ने समसामयिक मज़दूर आंदोलन के समक्ष इंटरनेशनल की दो मुख्य खूबियों के आधार पर खुद को संगठित करने की आवश्यकता पैदा कर दी है और वे खूबियां हैं—ढांचे की विविधता और लक्ष्य की मूलगामिता। 150 साल पहले स्थापित संगठन के उद्देश्य आज और अधिक महत्वपूर्ण हो गए हैं। बहरहाल वर्तमान की चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए नए इंटरनेशनल को दो बातें करनी ही होंगी—इसे बहुलतावादी होना होगा और इसे पूंजीवाद विरोधी होना होगा।